श्री इन्द्रदत्तसुकुल "महाराज" प्रणीता

स्मृतिसिद्धान्तचन्द्रिका

(तिथि – निर्णयः)

'अभिज्ञा' व्याख्यासहिता

पाण्डुलिपिसंशोधकः एवं 'अभिज्ञा' व्याख्याकारश्च

पण्डित श्रीरामचन्द्रशुक्लः

सम्पादकः

डॉ॰ रजनीकान्त शुक्ल

राधिका प्रकाशन, गोरखपुर

सजलजलदनीलश्चूर्णकर्चूरचैल-
शिचकुररुचिकपोलश्शीर्षतापिच्छचूडः।
शरदजलजनेत्रः कोऽपि बालो हृदीतात्
पुटकरटनकार्यो नूपुरो वेणुवेत्री।।

श्री इन्द्रदत्तसुकुल 'महाराज' प्रणीता

स्मृतिसिद्धान्तचन्द्रिका

(तिथि-निर्णयः)

'अभिज्ञा' व्याख्यासहिता

पाण्डुलिपिसशोधक अभिज्ञा व्याख्याकारश्च
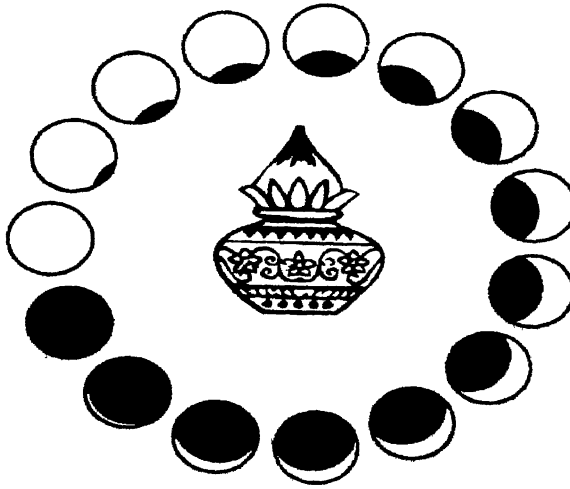
पण्डितश्रीरामचन्द्रशुक्लः

सम्पादक

डॉ० रजनीकान्तशुक्लः

राधिका प्रकाशन गोरखपुर

राष्ट्रिय संस्कृत सस्थान, नई दिल्ली की वित्तीय सहायता से प्रकाशित

प्रकाशक :
पण्डित रामचन्द्र शुक्ल
ग्राम—रामडीह, पोस्ट—पटखौली
गोरखपुर, उ०प्र०

प्रथम संस्करण : 1000 प्रतियाँ

पुस्तक प्राप्ति स्थान :
राधिका प्रकाशन केन्द्र
मकान न० 117, कजाकपुर नयी कालोनी
निकट तारामडल, गोरखपुर (उ० प्र०)

मूल्य : चौबीस रुपये (24.00)

लेज़र टाइप सैंटिंग
पंकज प्रिंटर्स
मौजपुर, दिल्ली—53

समर्पणम्

पितस्तव पादपद्मेषु, कृतिरेषा समर्पिता

रामचन्द्रशुक्ल

प्रकाशक
पण्डित रामचन्द्र शुक्ल
ग्राम—रामडीह पोस्ट—नटखोली
गोरखपुर, उ० प्र०

पुस्तक प्राप्ति स्थान
राधिका प्रकाशन केन्द्र
मकान नं० ११७, कजाकपुर नयी कालोनी
निकट तारामडल, गोरखपुर (उ० प्र०)

मूल्य

लेजर टाइप सैटिंग
पकज प्रिंटर्स
मौजपुर दिल्ली—५३

विषय-अनुक्रमणिका

डॉ० मण्डन मिश्र
कुलपति
सम्पूर्णानन्द सस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी – २२१००२

दूरलख श्रुतम
दूरभाष ३४४०८६ का० ३४८१३०
३४८६१७ नि० ३४८१३० फेक्स
पत्र स० १२८/६८
दिनाक १२/६/६८

अनुशंसा

मैंने स्व० श्री इन्द्रदत्त शुक्ल द्वारा लिखित 'स्मृति–सिद्धात चन्द्रिका' नामक ग्रन्थ का अवलोकन किया। यह ग्रन्थ अभिज्ञा व्याख्या से सुसम्पन्न है। इसके व्याख्याकार आदरणीय प० श्री रामचन्द्र शुक्ल हे। तिथि पर्व निर्णय आज के युग की एक अनिवार्य आवश्यकता है। जब शास्त्रो की प्राचीन परम्परा धीरे-धीरे पारिवारिक जीवन से लुप्त होती जा रही हे, ऐसे समय मे समाज के मार्गदर्शन के लिए इस प्रकार के ग्रन्थो की महत्ता बहुत बढ जाती है। हर व्यक्ति के लिए शास्त्रो का अध्ययन कर आवश्यक परामर्श प्राप्त करना सभव नहीं है। ऐसी स्थिति मे ऐसे ग्रन्थ की आवश्यकता एव उपयोगिता का सहज रूप मे अनुमान किया जा सकता है।

शुक्ल–परिवार धर्मशास्त्र की विद्वत्ता एव विद्या का एक प्रमुख केन्द्र रहा है। उनकी पुरी का नाम ही 'शुक्लपुर' है जो इस परिवार की प्रतिष्ठा का द्योतक है। शुक्ल वश का एक वश–वृक्ष भी दिया गया है जिससे इस परिवार के व्यापक स्वरूप का दृश्य स्पष्ट हो जाता है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जगद्गुरू शकराचार्य विद्यालय, इण्टर कालेज सन्त कबीर नगर के अवकाश प्राप्त आचार्य है। वे स्वय एक विख्यात विद्वान् हैं और स्मृतियो तथा धर्मशास्त्र के आचार्यो को अपने जीवन मे भी निर्वाह करते आ रहे हैं। अपने पिता के आज्ञा–पालन की दृष्टि से इस ग्रन्थ के सम्पादन, व्याख्या लिखकर समाज का जो उपकार किया है, इसके लिए वे अभिनन्दन के पात्र हैं। उनके पुत्र श्री रजनीकान्त शुक्ल ने इसके सम्पादन मे महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। श्री रजनीकान्त के साथ मुझे श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय सस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली मे कुलपति कार्यकाल मे काम करने का अवसर मिला है, वे एक अत्यन्न अनुशासित, शील और विनय के अधिष्ठाता है। शिक्षाशास्त्र के साथ–साथ आपको सम्पादन कार्य मे भी दक्षता प्राप्त है। विद्यापीठ की शोध–प्रभा का ये सम्पादन करते रहे हैं। उनके सम्पादन से इस ग्रन्थ के सुषमा में वृद्धि हुई है। मैं शुक्ल वश की विद्या–साधना के प्रति अपना आदर भेट करता हूँ और इस ग्रन्थ को विद्वत–समाज को अर्पित करता हूँ।

डॉ० मण्डन मिश्र
कुलपति

विद्यानिवास मिश्र

फ्क्स/टलीफान (०५४२) ३५६३०६
वृन्दा एन ३ बादशाह बाग
वाराणसी – २२१००२

समीक्षा

डॉ० श्री रजनी कान्त शुक्ल ने **स्मृति सिद्धात चन्द्रिका** (तिथि–निर्णय) के लगभग डेढ सौ वर्ष पूर्व लिखे ग्रन्थ का सम्पादन करके उसे नया कलेवर दिया हे। तिथि की अवधारणा बहुत ही महत्त्वपूर्ण अवधारणा है।

यह चन्द्र की गति से नियत्रित है। इसलिए यह अनुभवगोचर अवधारणा है। तिथि का महत्त्व प्रत्येक अनुष्ठान मे, यहॉ तक प्रतिदिन के सकल्प मे है क्योकि अखण्ड काल को समझने मे खण्ड काल सहायक होता है। हमारे कौन व्रत किस–किस तिथि मे होते हैं और वह तिथि कौन सी गृहीत है उस व्रत के लिए उदया, मध्याह्न व्यापिनी, प्रदोष व्यापिनी या निशीथ व्यापिनी इस पर विस्तृत विचार अनेक ग्रन्थो के प्रमाणपूर्वक इस ग्रन्थ मे किया गया है।

इसकी रचना व्याख्याकार के वृद्ध प्रपितामह श्री इन्द्रदत्त शुक्ल ने की थी। सपादक के पिता प० श्री रामचन्द्र शुक्ल ने इसकी अभिज्ञा व्याख्या लिखकर इसे सर्वसाधारण के लिए उपयोगी बना दिया है। महत्त्वपूर्ण व्रतो के अनुष्ठान के स्वरूप भी यथा स्थान दिए गए हैं। इन सबके कारण यह ग्रन्थ धर्मप्राण जनता के लिए बहुत उपयोगी है। सम्पादक इसके लिए साधुवाद के पात्र है।

आषाढशुक्ल १३, २०५५ **विद्यानिवास मिश्र**

सम्मति

मैंने स्व० प० श्री इन्द्रदत्त शुक्ल महाराज के द्वारा लिखित स्मृति–सिद्धात चन्द्रिका, (तिथि–निर्णय) ग्रन्थ को देखा। यह पुस्तक सनातन जगत् की अनेक जिज्ञासाओ का सारभूत समाधान है। हमारी भारतीय सस्कृति मे आत्मा को परलोक सम्बन्धी माना जाता है, अत उस परलोक सम्बन्धी आत्मा के कल्याण के लिए अपौरूषेय वेदो मे अनेक कर्मानुष्ठान एव तप का वर्णन है। उन सत्कर्मो के अनुष्ठान के लिए काल विशेष के निर्धारण की महती चिन्ता रहती है, काल, तिथ्यादियुक्त होता है। तिथियो का घटना बढना भी स्वाभाविक होता है। इस स्थिति मे तिथ्यादि काल के निर्धारण मे बडी कठिनाई सी रहती है।

विद्वान् लेखक ने इस ग्रन्थ की रचना से व्रत पर्व तिथि आदि का प्रामाणिक रूप मे निश्चित स्वरूप का उपस्थापन कर अत्यन्त उपकार किया है जिससे, सनातन लोक सदा अघमर्ण रहेगा। ग्रन्थविलोकन से मनीषी लेखक की अध्ययनशीलता वे साथ शास्त्रज प्रतिभा का अनुमान होता है।

ग्रन्थ की भावाभिव्यक्ति के लिए हिन्दी टीकाकार प० रामचन्द्र शुक्ल का पाण्डित्य भी सराहनीय है विद्वान् टीकाकार श्री शुक्ल ने अभिज्ञा टीका के द्वारा सामान्यजन तक विद्वान् लेखक के भाव को प्रसारित किया है, इसकी भाषा शैली तथा प्रतिपादन परम्परा टीकाकार की विद्वत्ता को प्रमाणित कर रही है। यह दोनो कार्य अत्यन्त स्तुत्य, ग्राह्य है।

आशा है कि इसके अध्ययन से पाठक को महान् लाभ होगा।

रामयत्न शुक्ल
राष्ट्रपति सम्मानित विद्वान्
भू०पू० आचार्य एव अध्यक्ष
स० स० वि० वि० वाराणसी

भूमिका

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मन ।
स्व स्व चरित्र शिक्षेरन् पृथिव्या सर्वमानवा ।।

भारतीय मनीषियो का यह प्राचीन उद्‌घोष किसी युग मे पूर्ण सार्थक था। गुप्त काल तक यह देश स्वर्ण पक्षी के नाम से विख्यात रहा। प्राणी मात्र मे एक ही तत्त्व का दर्शन भारतीय सिद्धात की पराकाष्ठा थी। **''सूर्य आत्मा जगतस्तथुषश्च''**। केवल मानव मात्र की एकता नहीं कही गयी है। पुरुष सूक्त के अनुसार सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के उद्‌भव का कारण एक है। **''पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृत दिवि''** पृथ्वी लोक एक चतुर्थांश है– शेष द्यूलोक मे है। भूतल का भी अण्डज, पिण्डज, स्वेदज उद्‌भिज जीव जन्तु एक ही परमात्मा की शक्ति से उद्‌भूत है। अत किसी के प्रति तिरस्कार का भाव ईश्वर का अपमान माना गया है। **एकोऽह बहुस्या प्रजाये**, यह भारतीय मनीषियो का स्वानुभव उद्‌घोष रहा है।

ब्रह्म का चिन्तक ब्रह्मविद् माना गया है। उसके हृदय मे अहकार दर्प, दम्भ, काम, क्रोध, जन्य विकार का अभाव हो जाता है। उसके लिये, इष्टानिष्ट समान होता है। **न द्वेष्टि न काक्षति**। समस्त जीवो मे अपने को तथा अपने मे समस्त जीवो का दर्शन करने वाला '**वासुदेव सर्वमिति**' इस परम ज्ञानानन्द से परिपूर्ण होकर **''आत्मवत् सर्वभूतेषु''** का स्वय अनुभूत भाव को सब मे अनुभव कराने का प्रयास करता रहा।

भारतीय सस्कृति–चिन्तन का यह अमृत बिन्दु इस देश के मस्तक को सदा उन्नत करता है–

'दुर्जनः सज्जनो भूयात् सज्जन शान्तिमाप्नुयात्।
शान्त मुच्येत् बन्धेभ्यो मुक्तश्चान्यान् प्रमोचयेत्'।।

सम्पूर्ण प्राणियो के हृदय मे सद्‌भाव भर जाय। सत्पुरुष शान्ति का अनुभव करे– शान्त चित्त जीव जन्म मृत्यु के बन्धन से मुक्त हो जाय– तथा मुक्त व्यक्ति सन्यासी के रूप मे सम्पूर्ण लौकिक विषय जन्य सुख का त्याग कर अन्य जीवो को जगत् के बन्धन से मुक्त कराकर परमात्मा का अनुभव करा दे, यही भारतीय सस्कृति की उदात्त परोपकार निष्ठा इसे जगत् गुरु के रूप मे प्रतिष्ठित किये था। जहा परमार्थ ही स्वार्थ है। राजर्षि रन्तिदेव तथा महर्षि दधीचि ने अतिथि के लिये व समाज के लिये, अपने शरीर तक का परित्याग कर दिया। इसीलिये

श्री व्यास जी कहते है—

ब्राह्मण का शरीर इन्द्रिय—विषय वाह्य सुख के लिये नहीं है। बहिर्मुख इन्द्रिया दुर्बल हो जाती है। परमात्मा का अनुभव करने व कराने के लिए आत्मानुभव करना परमावश्यक है—

बलहीन व्यक्ति आत्मसाक्षात्कार नही कर सकता है।

भगवती श्रुति कहती हैं— **"नायमात्मा बलहीनेन लभ्य "** इसीलिये भारतीय समाज का एक वर्ग सम्पूर्ण भोगो का त्याग कर के तत्व चिन्तन परमात्म शक्ति निरुपण मे सलग्न रहा। पितामह ब्रह्मा के मानस पुत्रो से ही यह परम्परा चल पडी— सनकादि मुनि तथा देवर्षि नारद जी अव्याहत गति से लोकत्रय मे समस्त सृष्टि के कल्याण हेतु विचरण करते रहे। सन्त परम्परा सिद्ध परम्परा, नाथ परम्परा, अवधूत परम्परा इसका उदाहरण है। आज भी भारत मे लाखो साधु सन्यासी सन्त सिद्ध केवल परमार्थ चिन्तन मे ही रत है।

निश्व के लोग इसीलिये विज्ञान के इस प्रगति मे विनाश से बचने के लिये भारतीय चिन्तन की ओर आशान्वित हे।

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड मे समष्टि रूप मे स्थित चेतन ब्रह्म है। उसी के चेतनाश से सम्पूर्ण स्थावर जगम प्राणवान् है। जगत के विषय भोगो का त्याग कर के जो लोग उस ब्रह्म का अनुभव करने मे तथा अन्य लोगो को सुख दु खात्मक जगत के बन्धन से मुक्त कराने के लिये तपस्या मे लीन हुये, उन्हे समाज मे ब्राह्मण की सज्ञा प्राप्त हुई। मुख्यत सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का आधार ब्रह्म का ही एकमात्र जो लोग चिन्तन करते रहे, तथा जिनका सम्पूर्ण जीवन जगत के कल्याण हेतु समर्पित था वे ब्राह्मण समाज मे अग्रणी माने गये। सम्पूर्ण सृष्टि ब्रह्म का स्वरूप है— उसमे ब्राह्मण वर्ग परहित मे निरत होने के कारण एव मुख्य होने से मुख कहा गया।

जैसे सम्पूर्ण भोज्य सामग्री मुख मे ही डाली जाती है परन्तु किसी अग को कभी विरोध नहीं होता। क्योकि वह समस्त अग को पोषण शक्ति प्रदान कर देता है— अपने अन्दर कुछ भी नहीं रखता। ठीक, इसी प्रकार ब्राह्मण अपना तप भी जीव मात्र के कल्याण हेतु दे देता रहा। इसलिए श्रीमद्भागवतकार ने कहा है—

कृच्छ्राय तपसे चेह प्रेत्यानन्तसुखाय च।

इस लोकमे ब्राह्मण कठिन तप करके परलोक के सुख के लिए शरीर धारण करता है तथा स्वय मुक्त होकर अन्य लोगो के मुक्ति हेतु सदा तत्पर

रहता है। बुद्ध व्यास जैन विवेकानन्द सदृश महात्मा आज भी जाने जाते है।

ब्राह्मण परम्परा

ब्रह्म ब्रह्मा ब्राह्मणश्च त्रितय ब्राह्मण उच्यते।

ब्राह्मण शब्द से वेद के एक भाग का भी बोध होता है– जिसमे कर्म काण्ड के विधि का निरुपण है। सृष्टि कर्ता पितामह वेद तथा वेदपुरुष परमात्मा की सज्ञा भी ब्राह्मण है। ब्रह्मसूत्र धारण करना प्रथम लक्षण था। यह ब्रह्मसूत्र विष्णु के नाभिकमल से उत्पन्न स्वय ब्रह्मा के शरीर मे सहज ही दिखायी दिया। कहते है– **"यज्ञोपवीत परम पवित्र प्रजापतेर्यत्सहज पुरस्तात्।"**

ब्राह्मण सज्ञा

वेद, पुराण, आगम के अनुसार ब्रह्मा जी सृष्टि विस्तार हेतु श्री विष्णु की आज्ञा से अपने तपस्या के प्रभाव से मरीचि, अत्रि, भृगु, पुलह, पुलस्त्य अगिरा, वशिष्ठ, क्रतु, नारद, दक्ष, तथा कर्दम सदृश अन्य लोगो को उत्पन्न करके उनको भी सृष्टि विस्तार हेतु आदेश दिया। परन्तु प्रारम्भ मे वे सभी लोग सनक, सनन्दन सनातन, सनत्कुमार के पथ पर चलने का निर्णय ले कर घोर तपस्या मे लीन हो गये। ब्रह्मा जी को बडी निराशा हुई वह चिन्ता करने लगे कि सृष्टि का विस्तार कैसे हो। परमात्मा की प्रेरणा से पूर्व सृष्टि के अनुभव से दम्पति स्वायभुव मनु एव शतरुपा को प्रगट कर के परस्पर उन्हे आकर्षित देखकर सृष्टि विस्तार मे सहयोग हेतु आदेश दिया–

मनु शतरुपा से उत्पन्न आकूती, देवहूती, प्रसूती को क्रमश रुचि, कर्दम एव दक्ष को प्रदान किया।

कर्दम एव देवहूती से नौ कन्याओ का जन्म हुआ। परमात्मा के आदेश तथा श्री ब्रह्मा जी के कहने पर तपस्या निरत मरीचि भृगु आदि ऋषियो ने कन्याओ को स्वीकार किया, वन मे रह कर तपस्या करने लगे, उनसे जो सन्ताने हुई वे ही ब्राह्मण के रूप मे पहले प्रसिद्ध हुयी। पुराण एव आगम के अनुसार आगे चलकर अनेक प्रभावशाली लोगो ने कर्म काण्ड कराने के लिये अन्य वश परम्परा को भी ब्राह्मण बना लिया– विश्वामित्र का ब्रह्मर्षि होना प्रसिद्ध है तथा ऋषभदेव जी ने अपने ८१ पुत्रो को ब्राह्मण बना दिया। द्वापर युग तक ऋषि एव गोत्र के नाम से ब्राह्मण की पहचान होती रही।

जाति

कलिकाल मे ब्राह्मण वश की सख्या का विस्तार देखकर जाति–गोत्र तथा गाव के नाम से वर्णन होने लगा।

काश्यप ब्राह्मण एव उनके वशज–भविष्य पुराण प्रतिसर्ग खण्ड ३ के अनुसार एक सहस्त्र वर्ष कलि काल के व्यतीत हो जाने पर कलिकाल के प्रभाव

से म्लेच्छाधिप का राज्य मे विस्तार होने लगा। श्री कृष्ण के धराधाम का त्याग कर के निज धाम चले जाने पर कलियुग के साथ म्लेच्छ भी भारत वर्ष मे आ गये। न्यूहाख्य यवन के द्वारा सम्पूर्ण पृथ्वी परिपूर्ण हो गयी–

''सम्पन्न भारत वर्ष तदा जात समन्तत·।
न्यूहाख्यो यवनो नाम तेन वै पूरित जगत्।।
सहस्राब्दकलौ प्राप्ते महेन्द्रो देवराट् स्वयम्।
काश्यप प्रेषयामास ब्रह्मावर्ते महोत्तमे।।

भ पु प्र ३/१०,११

आर्यावती के साथ विवाह कर के काश्यप ब्राह्मण ने १० पुत्रो को जन्म दिया। इनके पिता का नाम कण्व है। **कण्वो नाम मुनि श्रेष्ठस्सम्प्राप्त कश्यपात्मज** ''काश्यप कण्व ने चारो वेदो के द्वारा सरस्वती की उपासना किया। **सरस्वती नदी रुपा कुरुक्षेत्रनिवासिनीम्** यह नदी उस समय कुरुक्षेत्र मे बह रही थी।

चतुर्वेदमयैः स्तोत्रै· कण्वस्तुष्टाव नम्रधी।
दशपुत्रास्तयोर्जाता आर्यबुद्धि करा हि ते।।

इसी समय गोत्र के अतिरिक्त जाति एव उप जाति के रूप मे ब्राह्मण वश का वर्णन प्रारम्भ हो गया। यही वश पुन दश जाति के रूप मे आगे चल कर प्रसिद्ध हुये–

(१) उपाध्याय (२) दीक्षित (३) पाठक (४) शुक्ल (५) मिश्र (६) अग्निहोत्री (७) द्विवेदी (८) त्रिवेदी (९) पाण्डेय (१०) चतुर्वेदी।

भविष्य पुराण के अनुसार द्वापर मे लुप्त द्वारिका का उद्धार इन लोगो द्वारा हुआ। श्री कृष्ण के यह लोग उपासक थे। श्री निम्बार्काचार्य के सम्प्रदाय मे यह लोग दीक्षित हुये तथा द्वारिका मथुरा, वृन्दावन, जगन्नाथ पुरी तक जाकर धर्म का प्रचार प्रसार करते रहे।

सरस्वती की कृपा से भक्त वत्सला शारदा ने क्रमश उपाध्यायी, दीक्षिता, पाठकी, शुक्लिका, मिश्राणी, अग्निहोत्री, द्विवेदिनी, त्रिवेदिनी, पाण्ड्यायिनी, चतुर्वेदिनी के साथ उनका विवाह कर दिया जिनसे गोत्र प्रवर्तक १६ पुत्र हुये। गोत्र प्रवर्तक १६ ऋषि प्रसिद्ध हैं–

कश्यपश्च, भरद्वाजो, विश्वामित्रोऽथ गौतमः।
जमदग्निर्वशिष्ठश्च वत्सो गौतम एव च।।
पराशरस्तथा गर्गोऽत्रिर्भृगुश्चागिरास्तथा।
शृगी कात्यायनश्चैव, याज्ञवल्क्य· क्रमात्सुता।।

भ पु प्र २१/१३,१४

इसी क्रम मे अन्य ऋषि भी गोत्र एव प्रवर प्रवर्तक प्रसिद्ध है।

बौद्ध धर्म के प्रभाव को रोकने के लिए स्वय परमात्मा ने जगन्नाथ पुरी मे राजा इन्द्रद्युम्न को दर्शन देकर दारुपाषाण विग्रह के रूप मे प्रतिष्ठा हेतु आदेश दिया।

"बौद्धराज्यविनाशाय दारुपाषाणरूपवान्।
अह सिन्धु तटे जात लोकमगलहेतवे।।

इन्द्रद्युम्नश्च नृपति स्वर्गलोकादुपागत।
मन्दिर रचित तेन तत्राह समुपागत।। भ पु प्र २०/८७ ८८

कालान्तर मे कलि के प्रभाव मे सप्त पुरियो के लुप्त हो जाने पर काश्यप ब्राह्मण अपने तेजस्वी पुत्र शुक्ल को रैवत शिखर पर तपस्या करने हेतु भेजा—

नष्टाया सप्तपूर्या ब्रह्मावर्त महोत्तमम्।
सरस्वती दृषद्वत्योर्मध्यग तत्र चावसत्।।
स्वपुत्र शुक्लमाहूय द्विजश्रेष्ठ तपोधनम्।
आज्ञाप्य रैवत श्रृग तपसे तु पुन स्वयम्।। भ पु प्र ३/१४,१५

काश्यप ने अपने अन्य नो पुत्रो को मनुस्मृति प्रोक्त धर्मशास्त्र को पढाया। पिता के आदेश से शुक्ल नामक मुनि ने कठोर तपस्या द्वारा वासुदेव जगन्नाथ का दर्शन करके आशीर्वाद प्राप्त किया। स्वय वासुदेव भगवान ने उन्हे दिव्यधाम द्वारका का दर्शन कराया—

द्वारका दर्शयामास दिव्यशोभा समन्विताम्।
व्यतीते द्विसहस्राब्दे किञ्चिज्जाते भृगुत्तम।। भ पु प्र ३/१६

नारायण की कृपा से विष्वक्सेन नाम का एक पुत्र हुआ। सम्पूर्ण भारत वर्ष मे विचरण करते हुये म्लेच्छो का वेग रोकते हुए बौद्ध धर्म का प्रत्याख्यान किया ओर वैष्णव धर्म का प्रचार करते रहे।

गर्ग गोत्र शुक्ल वश

गर्ग गोत्रीय शुक्ल वश के ब्राह्मण श्री कृष्ण के उपासक तपोमय जीवन व्यतीत करते हुए समाज मे अपने सिद्धि के कारण विशिष्ट स्थान प्राप्त किये।

यह प्राय नदी के तट पर एकान्त मे रह कर श्री वासुदेव भगवान की आराधना करते रहे। शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा कात्यायन सूत्र के अनुसार इनका कर्मकाण्ड प्रसिद्ध रहा है।

इनकी वश परम्परा सम्पूर्ण भारतवर्ष मे विद्यमान है तथापि सरयू व राप्ती नदी के मध्य इनके प्रमुख स्थान प्रसिद्ध हैं।

समय चक्र के प्रभाव से राजा लोग परस्पर कलहरत होकर कमजोर होने लगे। छोटी छोटी रियासतें उभरने लगी। वे बौद्ध एव म्लेच्छ के प्रभाव से अपने को एव समाज का बचाने के लिये नदी के किनारे रहकर त्रिकाल सध्या करते हुए अपने इष्ट देवता के पूजन मे ही सम्पूर्ण जीवन लगा दिये। अनायास प्राप्त अयाचित वृत्ति से जीविका निर्वाह होने लगा। कृषि कर्म से विरत रहते थे, धन सग्रह इन्हे अभीष्ट नहीं था। इसीलिये इन्हे पक्ति पावन की सज्ञा प्राप्त हो गयी।

सरयू पारीण ब्राह्मण

सरयू नदी के दक्षिण रहने वाल लोग सरयू के उत्तर तटवर्ती ब्राह्मणो के विद्वत्ता आचार, विचार, व्यवहार से अतिशय प्रभावित होते रहे। परिणाम स्वरुप अध्यात्म की शिक्षा देने के लिये यह शुक्ल वश गर्ग गोत्रीय ब्राह्मण मध्यप्रदेश तक जाते रहे। इनके शिष्य सर्वत्र आज भी विद्यमान हे। बस्ती मे वासी रियासत, देवरिया मे सतासी रियासत प्रसिद्ध रही हे। दोनो के मध्य गोरखपुर मे उनवल, बढयापार, गोपालपुर स्टेट अपने समय मे स्वतत्र रियासते थीं।

राज्य व्यवस्था सनातन धर्म के अनुसार व्यवस्थित चलती रहे, इसके लिये राजा लोग योग्य ब्राह्मणो को अपने राज्य मे निवास हेतु प्रयास करते रहे, नि स्पृह ब्राह्मण अपने धर्म कर्म की रक्षा हेतु प्राय तटस्थ रह कर राजा एव प्रजा के मध्य समन्वय बनाते रहे। प्रजा को शिक्षा दिया कि राजा मे सम्पूर्ण देवताओ का वास है ''**सर्व देवमयो नृप** ''। तथा राजा को उपदेश दिया कि जो राजा कर लेकर प्रजा की रक्षा नहीं करता वह प्रजा के पाप का भागी होता है–

''**करहारोऽघमत्ति**'' इस प्रकार राजा प्रजा के मध्य ब्राह्मण सेतु का कार्य करता रहा। जिससे समाज समृद्ध सुखी अनुशासित बना रहा।

राप्ती नदी के किनारे भेडी गाव अवस्थित है। एक शुक्ल परिवार समाज के भीड से अलग रहकर तपस्या रत था। कुटुम्ब के बढने पर, किवदन्ती के अनुसार गोपालपुर के राजा जन्माष्टमी के अवसर पर तथा पर्व पर भेडी वकरुआ से लोगो को अपने यहा आमन्त्रित करते थे। बरसात मे उनके आने जाने की कठिनाई का अनुभव कर के वह अपने राज्य मे बडहल गंज के दक्षिण "मामखोर–खखाइचखोर" नाम से प्रसिद्ध गाव रहने के लिये दे दिया। भेडी गाव से आकर कुछ लोग यहा वस गये। शुक्ल वश के प्रतिष्ठित ब्राह्मणो का अयोध्या से पूरब कुआनो और आमी नदी के निकट आज भी मुण्डेरा, महसो आदि गाव प्रसिद्ध है। जहा आज भी पक्ति पावन लोग हैं। कालचक्र से उनकी सख्या सिमटती जा रही है।

ग्रथकार का परिचय

सुख–सुविधा के लिय काल के प्रभाव से मामखोर से एक परिवार गोरखपुर के उत्तर भटहट के निकट जौरहर गाव मे जाकर वस गया। वहा पर्याप्त भूमि थी तथा धीरे धीरे वह परिवार व्यवस्थित हो गया।

एक समय अनावृष्टि के कारण अकाल पड गया। चोर डाकुओ का उपद्रव बढ गया। परस्पर कलह का वातावरण उत्पन्न हो गया वहा से अन्यत्र जाने की इच्छा कुछ लोगो की हुई। उन्ही दिनो मे गोरखपुर के दक्षिण बढया पार रियासत अपने शक्ति व समृद्धि मे प्रसिद्ध था। बढयापार के पश्चिम दुबे लोग रहते रहे जो विवाह हेतु जोरहर तक चले गये। अपने प्रभाव से प्रभावित कर के एक लडके के पिता को कन्या के विवाह हेतु राजी कर लिया। किवदन्ती के अनुसार वह कन्या पर्याप्त धन लेकर जौरहर पहुची तो गाव के लोग नीचा दिखाने के लिये जाति से उसे बहिष्कृत कर दिया तथा साथ खाना पीना बद कर दिये। कन्या के पिता द्विवेदी जब अपनी लडकी के वहा गये– तथा गाव मे उसकी उपेक्षा देखा तो अपने दामाद व लडकी को साथ लेकर चले आये। वे बढयापार राजा के मत्री एव पुरोहित थे। उनके कहने पर राजा ने बढयापार के पूरब का इलाका उन्हे दे दिया। सहुआ गाव तरैना नदी के समीप विशाल आम एव महुआ कटहल आदि अमराइ से परिपूर्ण था, सुखपूर्वक वह परिवार यहा बस गया तथा तपस्या के लिये सम्पूर्ण सुविधा थी। विद्वत्ता के कारण तथा आचार विचार की शुद्धता से सभी लोगो मे इनका प्रभाव बढता गया।

मुसलमान तथा अग्रेजो के आक्रमण से बढयापार स्टेट भी प्रभावित हुआ। इस रियासत मे ओझा वश के ब्राह्मण पहलवान तथा लाठी चलाने मे कुशल रहे। राजा उनके शौर्य से प्रभावित होकर चौदह गाव उन्हे दे दिया यह उपमन्यु गोत्रीय करैली ओझा कहे जाते हैं। मलाव–डडिहल्थ रामडीह, हर्रैंडाड जगन्नाथपुर आदि गाव प्रसिद्ध हैं। इसी प्रकार राजा के सहयोगी द्विवेदी भी चौदह गाव मे बिखरे हैं।

ग्रन्थकार का सक्षिप्त परिचय–

राजा ने जौरहर से आये हुये शुक्ल वश के लोगो के लिये बारह गाव दे दिया। जो सहुआ, पोरवरहवा, इमलीडीह, लालपुर, सुकुलपूरी, कैथवलिया, ढेबरा तथा सुकुलपुरा, नगहरा, असौंजी, रघुनाथपुर, केशवपुर है। यही १२ गाव जौरहर गाव से आने के कारण जौरहर सुक्कुल नाम से प्रसिद्ध है।

आज इनकी शाखा विभिन्न स्थानो पर फैल गयी है। पहले इनमे पक्ति थी। धीरे धीरे पक्ति हटती गयी। गुरु परम्परा का वर्चस्व आज भी विद्यमान है। इस वश की शिष्य परम्परा मध्यप्रदेश तक फैली है। प्रतापगढ, जौनपुर, फैजाबाद

मे तथा गोरखपुर कमिश्नरी के चतुर्दिक कृष्ण भक्ति का प्रचार प्रसार इस वशज के द्वारा हो रहा है।

इसी वश परम्परा मे **'स्मृति सिद्धात चन्द्रिका'** के लेखक **श्री इन्द्रदत्त जी** (१८६० ई के आसपास) लालमणि सुकुल के चतुर्थ पुत्र हुये। लगभग सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे इनके पितामह श्री मोहन लाल जी के पितामह या प्रपितामह जौरहर से बढयापार राज्य मे आये थे। ग्रथकार ने पुस्तक के अत मे अपने पिता तथा प्रपितामह का नामोल्लेख किया है– **श्री मोहनलाल तनूजेन श्री लालमणि सुकुल सुनूना इन्द्रदत्त सुकुल उपाध्यायेन विरचितम्।।**

सम्वत् २००८ मे मेरे पिता श्री प सत्यनारायण ने मुझे इस **स्मृति सिद्धान्त चन्द्रिका** के जीर्णोद्वार हेतु आदेश दिया। प्राचीन हस्तलिखित पाण्डुलिपि मे प्राप्त वह ग्रन्थ पूर्ण रूप से मेरे लिये पठनीय नहीं था। इसलिये पिता जी स्वय बोलते रहे, और मैंने पाण्डुलिपि तैयार किया। समय के चक्र मे उस पुस्तक की कोई भी दूसरी पाण्डुलिपि अब उपलब्ध नहीं है। पिता जी के इच्छा की पूर्ति तथा अपने कुल के कृति की रक्षा हेतु इसे प्रकाशित कराने की भावना मुझ मे उत्पन्न हुई। लगभग ४५ वर्ष के अन्तराल हो जाने के कारण मेरी पाण्डुलिपि के भी यत्र तत्र जीर्ण शीर्ण हो जाने से प्रकाशित कराने मे कठिनाई उत्पन्न हुयी। परन्तु धर्म शास्त्र का अनुशीलन करके डा पद्मावती के सहयोग से उसे प्रकाशित करने योग्य बनाया गया। इस पाण्डुलिपि के प्रकाशन मे डा रजनी कान्त शुक्ल का सक्रिय सहयोग प्राप्त हुआ।

वश परिचय

पूर्व मे वर्णित है कि गोरखपुर से उत्तर अवस्थित जौरहर गाव से बढयापार राजा के मत्री या पुरोहित के दामाद के रूप में एक परिवार आया। सहुआ गाव मे प्रथमत लोग रहे। किवदती के अनुसार कुछ लोग पश्चिम कडसहरा होकर अन्य गावो में जाकर फैल गये।

सहुआ मे जिस परिवार का सबध इस वश से था उनमे पुस्तक के लेख के अनुसार तथा जनश्रुति के आधार पर श्री मोहन लाल जी के दो पुत्र का नाम आता है ज्येष्ठ श्री आनन्द मणि तथा कनिष्ठ श्री लालमणि जी हुये। श्री आनन्द मणि जी के वशज बढयापार के आस पास इमलीडीह, ढेबरा, लालपुर, सहुआ, पोखरहवा आदि मे रह गये। श्री लालमणि जी की तपस्या के प्रभाव से चार पुत्र चार फल की भाति हुए। जिसमे यज्ञदत्त जी ज्येष्ठ थे। उस समय के परिस्थिति के प्रभाव से वह यहा से अध्ययनार्थ अयोध्या चले गये, योग्य विद्वान होकर वहा अध्यापन भी कुछ समय तक किये। कनिष्ठ पुत्र श्री इन्द्रदत्त जी जिन्होने **स्मृति सिद्धांत चन्द्रिका**, उस समय के लिये दुर्लभ मौलिक ग्रथ की

रचना किया। वह बचपन मे ही काशी चले गये। वहा से विन्ध्याचल कुछ समय रहकर देवी की कृपा प्राप्त कर लिए। श्री कृष्ण के चरणो मे भक्ति एव देवी की कृपा से उनकी प्रसिद्धि सर्वत्र हो गयी। पिता जी कहते थे कि जगन्नाथ पुरी तथा वृन्दावन धाम मे श्री इन्द्रदत्त जी मध्याह्न काल मे पहुचे। वे प्रात से ही दर्शन की उत्कण्ठा से बिना जल पीये चलते रहे। जिस समय मन्दिर के सामने पहुचे दरवाजा बद था। पुजारी ने कहा ४ बजे तक प्रतीक्षा कीजिये। अभी मदिर नही खुलेगा। इनके साथ अन्य दर्शनार्थी भी उत्सुक निराश खिन्न दर्शन हेतु व्यग्र थे। वह एक चमत्कार ही था। भाव विभोर होकर इन्होने प्रभु को आर्तभाव से पुकारा, मदिर का फाटक खुल गया। सभी लोग भाव विह्वल होकर दर्शन कर के कृतकृत्य हो गये। श्री इन्द्रदत्त जी के इस प्रभाव पूर्ण चमत्कार को देखकर विभिन्न दर्शक वृन्द अपने वहा बुलाकर उनसे दीक्षा ग्रहण कर लिये।

इसी प्रकार विजय नगर स्टेट होकर विन्ध्याचल से आ रहे थे। राजा के दरबार मे प्रतिपद् तिथि को देवी की कृपा से चन्द्रदर्शन करा दिया, क्योकि इन्होने कह दिया था कि द्वितीया तिथि है। अन्य लोगो ने जब पञ्चाग, का उदाहरण प्रस्तुत किया तो इन्होने देवी का स्मरण किया। परिणाम स्वरूप इनका सम्मान रह गया। इसी चमत्कार से प्रभावित होकर विजयपुर राजा ने कई गाव कर मुक्त माफी के रूप मे इन्हे दिया था। जमींदारी उन्मूलन के पूर्व तक हम लोगो के अधीन वे गाव थे। गगा के किनारे छनवर ताल के निकट झिलवर, नीबी आदि गाव हैं।

प्रयाग के दारागज मे भी नगहरा के लोगो का आज भी मकान है जहा **श्री इन्द्रदत्त जी महाराज के गौरव गाथा एव कीर्ति का प्रमाण है।**

जनश्रुति है कि श्री यज्ञदत्त जी अयोध्या से अपने जन्म भूमि पर आये। बढयापार के दक्षिण दूबे लोगो का गाव हरपुर तथा राय लोगो का गाव हरदतपुर है। उनके वैदूष्य एव कर्म काण्ड से प्रभावित होकर दोनो गाव के मध्य ६० बीघा की आराजी उन्हे लोगो ने दे दिया। इस प्रकार श्री यज्ञदत्तजी लगभग १८६० सम्वत् के आसपास सुकुल पूरा गाव को बसाये तथा अपने पैतृक भूमि सहुआ से भी सबध बनाये रहे। कहा जाता है कि इमलीडीह मे तथा बढयापार मे रहने वाले अपने बन्धु वर्ग के परामर्श पर उस समय बढयापार रियासत से पिडरी गाव को बतौर रेहन ले लिया था। आगे चलकर इमलीडीह के अपने बन्धु को ८० बीघा दे दिया। उनके अधिकार में २०० बीघा था। जिसे इनके चार पुत्रो ने परस्पर बाट लिया। आज भी पिडरी मे सुकुल पूरा के लोगो का ही अधिकार है। कुछ लोग अपना हिस्सा बेच दिये।

जनश्रुति के आधार पर यह मालूम हुआ कि लखनऊ नबाब के वहा विद्वानो

का सम्मेलन हुआ। वहीं श्री यज्ञदत्त जी तथा श्री इन्द्रदत्त जी परस्पर शास्त्रार्थ किये। सहोदर होते हुये भी एक दूसरे को नहीं जानते थे। क्योकि श्री इन्द्रदत्त जी बाल्य काल मे ही घर से चले गये थे। परस्पर परिचय होने पर गले मिले। श्री यज्ञदत्त जी उन्हे लिवाकर आये। **सुकुल पुरा के दक्षिण नगहरा गाव उन्हे राय लोगो ने दे दिया।** यह स्थान ताल के किनारे एकान्त जन सम्मर्द से रहित है। यहीं रहकर **श्री इन्द्रदत्त जी** श्री कृष्ण की उपासना मे रत हो गये। आज तक प्रतिवर्ष कृष्ण जन्माष्टमी का पर्व धूमधाम से यहा मनाया जाता है।

श्री लालमणि जी के द्वितीय पुत्र केशवदत्त कुआनो नदी के तट पर केशवपुर नामक गाव बसाकर रहने लगे। परन्तु इस समय वहा इस वश की परम्परा नहीं चल रही है। तृतीय पुत्र ठाकुरदत्त तरैना नदी के तट पर रघुनाथपुर नाम से गाव बसाकर अवस्थित हो गये।

लोक प्रसिद्धि के दृष्टिकोण से नगहरा, असौजी, सुकुलपूरा अधिक यशस्वी रहा। पूर्वज लोग अपने दरवाजे पर ही विद्यालय की स्थापना कर के शिक्षा का प्रसार करते रहे, सरस्वती एव लक्ष्मी दोनो का यहा निवास था। कुटुम्ब के लोगो के नाम करण से ही विदित होता है कि देवी के तथा श्रीकृष्ण के यह लोग परम भक्त थे। श्री यज्ञदत्त जी के ४ पुत्र थे– (१) शीतल प्रसाद (२) वेनी प्रसाद (३) गगाप्रसाद (४) भवनदत्त।

शीतल प्रसाद जी के पुत्र गौरीदत्त विद्वान तथा देवी के कृपा पात्र थे, दूर दूर तक उनके शिष्य गण आज भी हैं।

श्री वेनी प्रसाद जी के पुत्र श्री शिवदत्त जी उनके पुत्र श्री कमलाकान्त जी तेजस्वी तथा प्रखर प्रतिभा सम्पन्न थे। अपने प्रभाव से उस समय उन्होने चतुर्दिक कीर्ति पताका फहराने के साथ साथ भूमि–भवन का विस्तार किया। समस्याओ के निवारण हेतु आसपास के लोग उनसे परमर्श लेते थे। उनके एक भाई श्री लक्ष्मीकात थे, जिनकी मात्र एक लडकी थी। श्री कमलाकान्त जी के श्री सत्यनारायण श्री याज्ञवल्क्य व श्री गणपति तीन पुत्र हुये। श्री कमलाकान्त जी गाव के पूरब बाग मे विशाल 'ठाकुर द्वारा' का निर्माण करा रहे थे, पिता जी कहते थे कि "मैंने उन्हें मना किया कि इस दिशा मे निर्माण कराने से हानि होगी या तो पुत्र नहीं रहेगा या स्वय को हानि होगी परन्तु स्वाभिमानी वह अपने ही पुत्र की बात क्यो मानते। परिणाम स्वरूप तृतीय पुत्र श्री गणपति जी का अकाल मे निधन हो गया। स्वय भी लगभग ६१ वर्ष की अवस्था मे वह दिवगत हो गये। तब से पिता जी पर पूर्ण भार आ गया जो विरोध उत्पन्न करके उनके पिता गये थे उसका सामना पिता जी ने बडे कौशल से किया। जनपद मिर्जापुर व बस्ती तक जमीन बढाया तथा उन पर

विन्ध्यवासिनी देवी की विशेष कृपा थी। उनकी भविष्यवाणी सत्य होती थी। आज भी उनके शिष्य गण चर्चा करते हैं। अपने वैदुष्य सिद्धि व इष्ट बल के प्रभाव से विन्ध्याचल के दक्षिण से लेकर तराई के उत्तर तक उन्होने जमीन का तथा शिष्यों का विस्तार किया। श्री प सत्यनारायण जी के पाच पुत्र हुये। श्री वैजनाथ जी तथा श्री विन्ध्याचल श्री आद्या प्रसाद, रामचन्द्र व दुर्गा प्रसाद। पाच पुत्रो मे श्री विन्ध्याचल की वश परम्परा नहीं चली, उनकी दो पुत्रिया थी।

श्री वेजनाथ सुकुल के पुत्र भैरो प्रसाद, पौत्र रमेश सुकुल हुये।

श्री इन्द्रदत्त जी के नन्दकिशोर तथा गोपाल शरण दो पुत्र हुये। इनके नाम से ही श्री इन्द्रदत्त जी महाराज की कृष्ण भक्ति जानी जाती है। श्री नन्दकिशोर जी के क्रमश १– श्री गोविन्दशरण २– श्री राधारमण ३– श्री श्याम सुन्दर ४– श्री कान्त ५– श्री रेवतीरमण, पाच पुत्र हुए।

श्री गोविन्दशरण असौंजी गाव मे अवस्थित हो गये। श्री कान्त जी को मात्र १ लडकी थी, जिसका विवाह दुबे के वहा कर दिया उससे वश नहीं चला। पति के दूसरी पत्नी से उत्पन्न सन्तान नगहरा मे अवस्थित हैं।

श्री गोपाल शरण जी के पुत्र श्री मनमोहन जी उनके पुत्र श्री चन्द्रिका उनसे श्री बलदेव श्री राम प्रसाद तथा श्री माधव प्रसाद हुये। श्री राम प्रसाद जी के श्री निवास आचार्य, लक्ष्मी निवास आचार्य विद्यमान हैं। श्री निवास से श्री गर्भ जी तथा प लक्ष्मी निवास के श्री भूगर्भ एव पृश्निगर्भ है। श्री इन्द्र दत्त जी के द्वितीय पुत्र गोपालशरण जी के द्वितीय पुत्र लाल विहारी जी हुये। उनके वेणीमाधव उनसे तीर्थराज, श्री तीर्थराज से श्री रमाकान्त उनके ५ पुत्र विद्यमान हैं। श्री लक्ष्मीकात, श्री गोपीकान्त, श्री कमलाकान्त, श्री मार्कण्डेय, श्री उमाशकर। आज भी नगहरा एव सुकुलपुरा मे विद्वानो की परम्परा विद्यमान है। नगहरा मे प आचार्य श्री निवास जी, प लक्ष्मी निवास जी एव श्री अवधेश जी विद्वान होने के साथ साथ आचार निष्ठ कर्म निष्ठ ब्राह्मण हैं। आज भी दूर दूर तक इनकी ख्याति है।

श्री प यज्ञदत्त जी स्वय अपने समय के उद्भट् विद्वान थे उनके पुत्र श्री गगाप्रसाद भी विद्वान थे। स्वय अपने दरवाजे पर विद्यालय की स्थापना कर के विद्या दान करते थे। गगा प्रसाद जी के शिवप्रसन्न एव शिवहर्ष जी दो पुत्र थे शिवप्रसन्न के गुरुचरण उनके शिवपूजन उनसे प ललितेश्वर प अनिरुद्ध व पद्मनाभ शुक्ल हुये। श्री अनिरुद्ध जी व्याकरण व आयुर्वेद के विशिष्ट विद्वान है। इस समय वे गोरखपुर के उत्तर सिसवा में सपरिवार बस गये।

श्री शीतल प्रसाद के परम्परा में श्री गौरीदत्त जी विद्वान एव श्री जगदम्बा के कृपापात्र थे उनकी परम्परा मे श्री प विश्वनाथ आचार्य व प रघुनाथ जी

आचार्य हुये।

ऊपर लिखा जा चुका ह कि श्री मोहन लाल जी के पुत्र लालमणि जी के चार पुत्र थे। श्री यज्ञदत्त जी सुकुलपूरा जो रामडीह के पश्चिम मे है, बस गये। श्री इन्द्र दत्त जी नगहरा मे, ठाकुर दत्त जी तरैना नदी के निकट रघुनाथपुर नाम के गाव मे रह गये। यह सभी लोग नदी एव तालाब की सुविधा के अनुसार बसे थे। श्री लाल मणि जी के ज्येष्ठ भ्राता श्री आनन्द मणि थे– उनके दो पुत्र श्री देवदत्त तथा गनेश दत्त सुकुल हुये। इन लोगो के वशज सहुआ, इमलीडीह, बढयापार, पोखरहवा, लालपुर, ढेवरा, सुकुल पुरी महुई के उत्तर तथा कैथवलिया मे अपना विस्तार किये हैं जो प्रसिद्ध हैं।

प्राप्त विवरण के अनुसार श्री देवदत्त जी के तीन पुत्र थे। तथा श्री गनेश दत्त सुकुल के छ पुत्र थे। श्री रामाश्रय सुकुल, श्री हरिनरायन सुकुल, श्री ईश्वर दत्त सुकुल श्री नारायण दत्त सुकुल, श्री किशन दत्त एव श्री गगादीन सुकुल। श्री हरिनारायन जी के त्रिभुवन सुकुल उनसे नकछेद सुकुल उनसे यमुना तथा सरजू दो पुत्र हुये। श्री जमुना सुकुल के जर्नादन, विद्याधर, भोलानाथ के वशज लालपुर मे स्थित हैं।

अपने पूर्वजो के सदाचार एव विद्वता से प्रभावित होकर लालपुर के लोग सुकुलपूरा मे दीक्षा लेकर अपने ही पितामह आदि को गुरु बना लिया। इसी प्रकार महुई के उत्तर अवस्थित सुकुलपूरा के लोग श्री इन्द्रदत्त जी के वशजो से नगहरा मे जाकर दीक्षा ग्रहण कर लिया है।

इस प्रकार सुकुलपूरा विद्वानो की खान थी। क्षेत्र के लोग धर्मशास्त्र सबधी निर्णय हेतु यहीं आते रहे हैं।

इस समय राम चन्द्र शुक्ल आचार्य व दुर्गाप्रसाद रामडीह मे रह रहे हैं। जिनके वशज शिक्षा, चिकित्सा, प्रावधिक क्षेत्र मे कार्यरत हैं।

इस से इस वश परम्परा मे शिक्षा, सदाचार, सत्कर्म तथा सामाजिक प्रतिष्ठा स्वत प्रख्यात है। वश का कालक्रम लगभग इस प्रकार है–

१	श्री यज्ञदत्त	सम्वत् १८४५–१६१५
२	श्री वेनी प्रसाद	सम्वत् १८६५–१६३०
३	श्री शिवदत्त	सम्वत् १८६०–१६५५
४	श्री कमलाकात सुकुल	सम्वत् १६१०–१६७१
५	श्री सत्यनारायण सुकुल	सम्वत् १६३०–२००६
६	श्री रामचन्द्र शुक्ल	सम्वत् १६८८–अब तक
७	श्री देवव्रत शुक्ल	सम्वत् २०१३–अब तक

वश वृक्ष

- श्री यज्ञदत्त सुकुल
  - श्री शीतल प्रसाद
    - श्री गौरी दत्त
      - श्री विन्देश्वरी
        - श्री दशरथ
          - श्री भूलन
            - श्री रघुनाथ
            - श्री प विश्वनाथ
        - श्री अम्मा भगवती
          - श्री रामसुन्दर
          - श्री बिहारी
      - श्री रामदयाल
  - वेनी प्रसाद
    - श्री शिवदत्त
      - श्री प कमलाकात
        - श्री प सत्यनारायण
          - श्री वैजनाथ
            - श्री भैरो शुक्ल
          - श्री विन्ध्याचल
          - श्री आद्याप्रसाद शुक्ल
            - श्री मधुसूदन शुक्ल
            - श्री गिरीश शुक्ल
          - श्री रामचन्द्र शुक्ल
            - डॉ देवव्रत शुक्ल
            - श्री नलिनीश शुक्ल
            - डॉ रजनीकात शुक्ल
            - श्री वाचस्पति शुक्ल
            - श्री रजनीश शुक्ल
          - श्री दुर्गाप्रसाद शुक्ल
            - श्री ब्रजेन्द्र शुक्ल
            - श्री ब्रह्मानन्द शुक्ल
            - श्री नित्यानन्द शुक्ल
            - श्री सत्यानन्द शुक्ल
        - श्री याज्ञवल्क्य
          - श्री कालिका सुकुल
      - श्री लक्ष्मीकात
    - श्री जनक
  - गगा प्रसाद
    - श्री शिवप्रसन्न
      - श्री गुरुचरण
        - श्री शिवपूजन
          - श्री ललितेश्वर
          - श्री अनिरुद्ध
          - श्री पद्मनाभ
    - श्री शिवहर्ष
      - श्री गजाधर
        - श्री रामदेव
  - भवनदत्त
    - श्रीदत्त
      - श्री बलिभद्र
        - श्री महादेव
          - श्री चण्डी
          - श्री यमुना
        - श्री रामअनुग्रह
          - श्री ओरी
    - श्री हरिदत्त
      - श्री भोला
        - श्री रामसेवक
    - श्री मोहनदत्त
      - श्री जगेसर
        - श्री रामजी
          - श्री कृष्ण मुरारी
      - श्री रामकव
        - श्री गनेश

उपसहार -

स्मृति सिद्धात चन्द्रिका की दुर्लभ पाण्डुलिपि के प्रति पिता जी की अपार श्रद्धा थी। वह उसकी रक्षा करने के लिये प्रयत्न शील थे। मै सवत् २००७ मे शास्त्री प्रथम वर्ष मे था तभी उन्होने आदेश देकर तथा स्वय बोलकर मुझ से लिखवाया।

इस समय तो धर्मशास्त्र सम्मत पर्व एव व्रत के सबध मे अनेक ग्रन्थ उपलब्ध है। परन्तु १५० वर्ष पूर्व साधन के अभाव मे **श्री इन्द्रदत्त जी महाराज** ने पुराणो एव स्मृतियो का आलोडन कर के इस ग्रथ की रचना की। जो आज के समय मे भी परम उपयोगी है। इस पाण्डुलिपि की कई लोग अपने हाथ से लिखकर अपने यहा रखे थे और पर्व–उत्सव के सन्देह होने पर इसी के माध्यम से तिथि के कार्यकाल का निर्णय करते थे। शनै–शनै यह पाण्डुलिपि सुरक्षा की असावधानी के कारण प्राय लुप्त हो चली। परतु मेरे पिता जी अन्वेषण कर के इस की एक प्रति श्री प ललितेश्वर जी के वहा से ले आकर लिखवाये वह मूल प्रति आज उनके वहा भी नहीं मिल रही है। ऊपर लिखा जा चुका है कि मेरे पिता जी श्री सत्यनारायण जी धर्मशास्त्र–ज्योतिष, कर्मकाण्ड, तत्र व वास्तु शास्त्र का अभिज्ञान था। वे दैवी प्रतिभा समन्वित थे। श्रीमद्भागवत उनका इष्ट ग्रथ था। उनकी भविष्यवाणी प्राय सत्य होती रही। पिताजी का सस्मरण था–स्वय अपने सबध मे बहुत उन्होने पहले उन्होने बताया कि ७६ वर्ष तक यह शरीर रहेगा। मैं २१ वर्ष का था। शास्त्री व्याकरण से प्रथम वर्ष प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण होकर नवरात्र के अवकाश मे घर आया था।

मेरे पिता जी सम्वत् १६६० के बाद से ही सुकुलपूरा से रामडीह आ गये थे। यही से सम्पूर्ण कार्य देखते थे। इनके ज्येष्ठ पुत्र श्री वैजनाथ जी अलग हो गये तथा श्री आद्याप्रसाद जी सुकुलपूरा मे ही रह गये। मेरी माता श्रीमती अभिराजी का कोई भाई नहीं था। अत हम दोनो भाइयो को साथ लेकर वह रामडीह अपने मायके मे ही रहने लगीं। मातामह के सम्पत्ति के अतिरिक्त मेरे पिता तथा पितामह द्वारा रामडीह मे बैनामा के द्वारा अधिकाश लोगो का हिस्सा, खरीद लिया गया था। इसलिये पिता जी रामडीह मे रह रहे थे।

सम्वत् २००६ अश्विन शुक्ला चतुर्दशी बुधवार का वह दिन आज भी अविस्मरणीय है। केवल चार दिन पिता जी साधारण ज्वर से पीडित थे। दोपहर को जब श्री रामदास ओझा उनसे मिलने आये तो मेरे सामने उन्होने प्रथम बार कहा "अब चली चला है"। दोपहर से रात्रि तक आने वाले लोगो का ताता लगा हुआ था। सबसे प्रसन्न मुद्रा मे बात करते रहे। किसी प्रकार की चिन्ता शोक या मोह उनके मन मे नहीं था। रात्रि मे लगभग ६ बजे उन्होने कहा कि

सब लोग भोजन कर ले। पुन मुझे बुलाकर कहे कि आगन गाय के गोबर से लीप दिया जाय। तथा कुश बिछा दिया जाय। मैं मत्रमुग्ध की भाति सब करता रहा। घर मे छोटे भाई १६ वर्ष की अवस्था मे दुर्गा थे, मा थी और मेरी पत्नी श्रीमती राधिका थी। शेष लोग आते जाते रहे। बडे भाई आद्या दिन मे ही देखकर चले गये थे। अतत १० बजे रात्रि को मेरे ही कन्धो पर हाथ रखकर अपने पैरो से चलकर दालान से आगन मे आये तथा दक्षिण पैर कर के लेट गये। तुलसी व शलिग्राम का जल ग्रहण किये। पैर मे जलन होने लगी तो मुझ से कहे कि देवी कवच का पाठ करते रहो। इस प्रकार पिताजी ने योगियो की भाति शरीर का त्याग पूर्ण स्वस्थ एव देवी का स्मरण करते हुये कर दिया।

इस **स्मृति सिद्धात चन्द्रिका** (तिथि निर्णय) मे व्रत पर्व उत्सव का निर्णय किया गया है। यह तिथि प्रधान ग्रथ है। विभिन्न मास मे आने वाली तिथियो के अनुसार व्रत पर्व उत्सव का निर्णय किया गया है। अनेक पुराणो तथा स्मृतियो से सग्रहीत है। जो उन उन स्थानो पर अपने निर्णय मे स्मृतियो तथा पुराणो का उल्लेख किया गया है। अत में व्रत, उपवास, मलमास, सक्रान्ति तथा ग्रहण विचार का भी विवेचन किया गया है।

इस ग्रथ को प्रकाशित कराकर मैं अपने पिता की हार्दिक भावना का मूर्तिमान रूप देखना चाहता था जो उनके आशीर्वाद का प्रतिफल है।

इससे यदि कोई भी धर्म प्राण व्यक्ति कुछ लाभ उठा सके अथवा अपनी जिज्ञासा के अनुसार समाधान प्राप्त कर सके तो यह प्रयास सफल होगा। इस ग्रंथ के परिशिष्ट मे शुक्रविचार का निर्णय दिया गया है। वधूप्रवेश एव द्विरागमन मे शुक्र का दोष कब माना जाये इसमे मेरे पिता जी की परम्परानुसार यह मत था कि यदि कन्या विवाह मे पति के साथ नहीं जाती है तो १६ दिन के बाद शुक्र का विचार करना आवश्यक है। द्वितीय परिशिष्ट मे व्रत पर्व व तिथि का वर्णन है। इसी के समर्थन मे समीक्षा करते हुये विविध प्रमाण का अनुशीलन कर के विवेचन किया गया है। सुधीजनो के सुझाव एव आशीर्वाद की सदा अपेक्षा रहेगी।

रामचन्द्र शुक्ल आचार्य
अवकाश प्राप्त सस्कृत प्रवक्ता
श्री जगद्गुरु शकराचार्य विद्यालय
मेहदावल, सत कबीर नगर
उत्तर प्रदेश।

पुरोवाक्

मानव जीवन का परम उद्देश्य पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति है जिसमे मोक्षरूपी साध्य का सबसे प्रमुख साधन धर्म है। **धारणात् धर्म इत्याहु धर्मो धारयते प्रजा** इस वचन से स्पष्ट है कि धारण करने के कारण ही धर्म को धर्म कहा गया हे और धर्म भी समाज की सच्ची अवधारणा का मूल है। धर्म के बिना भारतीय सस्कृति की कल्पना नहीं की जा सकती है। धर्म किसी सम्प्रदाय, जाति विशेष का प्रतीक नहीं है अपितु मानवता मात्र का प्रेरक है।

धर्म पूर्वक आचरण करने से ही मोक्ष प्राप्त होता है यह सत्य है जो कि चरम पुरुषार्थ है। इसी आचरण का वाछनीय स्वरूप स्मृतियो, सूत्रो, सिद्धातो, सहिताओ मे प्रतिपादित किया गया है। समय–समय पर आचार्यो, आप्तपुरुषो, विद्वानो ने आचार सहिता के माध्यम से मानव मूल्यो की स्थापना का कार्य किया हे जिससे एकता, अखण्डता, अस्मिता, नैतिकता, विश्वसनीयता आदि मूल्यो की रक्षा होती है। यह तथ्य **'धर्मो रक्षति रक्षित'** इस महावाक्य द्वारा स्वय पुष्ट हो जाता है। भगवान् श्री कृष्ण ने गीता मे कहा है–**चातुर्वर्ण्यं मया सृष्ट गुणकर्मविभागशः।** अत समाज किसी वर्ग विशेष का नाम नहीं है। समाज के सभी वर्णों के द्वारा जो व्यवस्था आदृत हो, मान्य हो ऐसी ही व्यवस्था को चिन्तको, साधको ने धर्म के रूप मे मान्यता दी है। गौतम धर्मसूत्र, मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति, पाराशर स्मृति आदि अनेकार्ष ग्रन्थो मे धर्म के सम्बन्ध मे विस्तृत विचार प्रस्तुत किये गये हैं। मनीषी तत्त्व चिन्तक इसी परम्परा को निरतर आगे बढाते रहे हैं।

धर्म पालन करने मे काल, तिथि तथा मुहूर्त का अत्यधिक महत्त्व है। शास्त्रकारो का दृढ मत है कि क्रियमाण कार्यो एव करने वाले साधक को अपनी कुशलता एव कार्यो की सफलता के लिए तिथि, काल, लगन एवम् नक्षत्र आदि के सुयोग का विशेष ध्यान रखना चाहिए। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु आज से लगभग एक सो पचास वर्ष पूर्व हमारे पूर्वज गर्गवश शिरोमणि स्वनाम धन्य स्व० प० श्री इन्द्र दत्त शुक्ल जी महाराज ने **स्मृति सिद्धान्त चन्द्रिका** (तिथि–निर्णय) नामक ग्रन्थ की रचना की थी जिसके माध्यम से तत्कालीन समाज के लोग धार्मिक कृत्यो के सम्बन्ध मे व्रत, पर्व, त्यौहार आदि का निर्णय करते थे। उस समय प्रकाशन की व्यवस्था न होने से विद्वान् वशज पुस्तक की हस्तलिखित

प्रतियॉ तैयार करवाकर परम्परा की रक्षा तथा पाण्डुलिपि की सुरक्षा करते आ रहे थे। इस पाण्डुलिपि की मात्र एक ही प्रति मेरे पितामह प० श्री सत्यनारायण शुक्ल जी के पास थी जिसकी सहायता से वे भी श्रद्धालुओ को धार्मिक अनुष्ठान, व्रत, पर्व, तिथि आदि के विषय मे व्यवस्था देते रहे। पाण्डुलिपि काफी पुरानी होने से क्षीण हो रही थी इस बात को ध्यान मे रखकर पितामह ने मेरे पिता को वि० स० २००८ मे प० श्री रामचन्द्र शुक्ल को पाण्डुलिपि की रक्षा का दायित्व सौंपते हुए अपने निर्देशन मे मूल प्रति से दूसरी प्रति तैयार करवायी।

प० श्री रामचन्द्र शुक्ल काशी की परम्परा मे शास्त्रीय विषयो के अध्ययन के पश्चात् सस्कृत महाविद्यालय सोहगौरा, गोरखपुर तथा जनता उच्चतर माध्यमिक विद्यालय इन्द्रपुर गोरखपुर मे अध्यापक के रूप मे कार्य किए तत्पश्चात् श्री जगद् गुरू शकराचार्य विद्यालय इण्टर कालेज मेहदावल, सन्त कबीर नगर मे सस्कृत प्रवक्ता पद पर १९९३ तक कार्य किये। इसके अनन्तर भारत सरकार की स्वायत्त सस्था राष्ट्रिय सस्कृत सस्थान नई दिल्ली की शास्त्र चुडामणि योजना के अन्तर्गत सम्मानित आचार्य के रूप मे श्री सनातन धर्म सस्कृत महाविद्यालय मुक्तीश्वरनाथ हॉसूपुर गोरखपुर मे शास्त्रीय विषयो का अध्यापन कार्य करने लगे। यही समय उपयुक्त जानकर उन्होने पितामह से प्राप्त न्यास के प्रकाशनार्थ पाण्डुलिपि का समग्र आलोडन करके एव विविध धर्मशास्त्रो का अनुशीलन करके तथा मूल ग्रथ स्वरूप की रक्षा करते हुए मुद्रणार्थ प्रति तैयार की। आदरणीय लेखक के वश की शाखाए वर्तमान मे विविध स्थानो पर निवास कर रही हैं प्राय उन सभी स्थानो पर जाकर उन्होने वशवृक्ष के स्वरूप का विस्तृत विवेचन एकत्र कर भूमिका मे प्रस्तुत किया है।

यह सस्कृत पाण्डुलिपि मुद्रणोपरान्त जन सामान्य तक पहुँचे इस दृष्टि से मूल सस्कृत ग्रन्थ के साथ स्वर्गीया दादी अभिराजी की स्मृति मे पिताजी ने अभिज्ञा नाम से हिन्दी व्याख्या रची, जिसका प्रकाशन मूल ग्रन्थ के साथ किया जा रहा है।

सनातन धर्म के प्रति निष्ठा एव धार्मिक प्रवृत्ति के कारण उनकी समाज मे विशेष प्रतिष्ठा है। तथा ये ज्योतिष, धर्मशास्त्र, कर्मकाण्ड के विद्वान हैं। आज भी पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक उत्सव हो तो जिज्ञासु जन श्रद्धावश आकर शास्त्रीय व्यवस्था की प्रामाणिक जानकारी प्राप्त करते हैं। आज के विकसित समाज मे कन्या की विदाई एव व्रत, पर्व महत्ता के विषय मे कुछ भ्रान्तिया हैं। इस तथ्य को ध्यान मे रखकर उन्होने प्राचीन परम्परा की रक्षा के लिए द्विरागमन विमर्श, (कन्या की विदाई मे शुक्र विचार) एव व्रत, पर्व और तिथि की महत्ता

का शास्त्रीय प्रमाणो के साथ विवेचन भी प्रस्तुत किया है जिसे परिशिष्ट के रूप मे प्रकाशित किया जा रहा है।

स्व० प० श्री इन्द्रदत्त शुक्ल द्वारा प्रणीत **स्मृति सिद्धात चन्द्रिका** (तिथि-निर्णय) के इस पाण्डुलिपि के प्रकाशन मे मूल कारण पितामह की सत्प्रेरणा एव पिताजी की सत्सकल्पना का यह वशवृक्ष सदैव ऋणी रहेगा।

भारतीय सस्कृति एव सस्कृत के सरक्षक विविध सस्थाओ के सस्थापक धर्मशास्त्र एव मीमासा के परम्परानुमोदित लब्ध प्रतिष्ठित विद्वान् एव सम्पूर्णानन्द सस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी के कुलपति डा० मण्डन मिश्र जी ने इस पुस्तक के लिये जो अनुशस्ा लिखने की कृपा की है हम इसे अपना गौरव मानते है। एतदर्थ अत्यन्त प्रणत भाव से मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।

विविध विद्या निष्णात एव अनेक भाषाओ के ज्ञाता लब्धप्रतिष्ठ सस्कृत के मूर्धन्य विश्वविश्रुत विद्वान तथा हिन्दी के अग्रणी साहित्यकार आचार्य विद्यानिवास मिश्र ने अनेक कार्यो मे व्यस्त रहते हुए भी अमूल्य समय निकालकर पुस्तक की समीक्षा की है अत उनकी इस कृपा के लिए मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूँ।

सपूर्णानन्द सस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी के व्याकरण विभाग के पूर्व (आचार्य एव अध्यक्ष) तथा राष्ट्रपति सम्मानित विद्वान् प० श्री रामयत्न शुक्ल ने इस ग्रन्थ की महत्ता पर जो प्रकाश डाला है एतदर्थ सपादक आचार्य श्री का अनुग्रहीत है।

इस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि तैयार करने मे मेरी आदरणीया विदुषी वहिन डॉ० श्रीमती पद्मावती त्रिपाठी, प्राध्यापिका, श्री सनातन धर्म सस्कृत महाविद्यालय मुक्तीश्वर नाथ हॉसूपुर गोरखपुर का सक्रिय सहयोग रहा है, जिसके लिए मैं विदुषी वहिन के प्रति हृदय से आभारी हूँ।

मैं इस पावन कार्य मे पारिवारिक सदस्यो, गुरुजनो, विद्वान परामर्शको आदि से प्राप्त सहयोग के प्रति नतमस्तक हूँ।

प्रस्तुत पुस्तक का मुद्रण कार्य बडी ही निष्ठा व लगन से पकज प्रिन्टर्स मौजपुर, दिल्ली ने किया है अत वे विशेष रूप से धन्यवाद के पात्र हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ प्राचीन भारतीय सस्कृति की आत्मा धर्म का प्रतिपादक है। यह न्यास पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। यदि जिज्ञासु विद्वान् व धर्म प्राण जनता लेश मात्र भी इस पुस्तक से लाभान्वित हो तो यह प्रयास सफल व सार्थक होगा। गर्ग वश का यह न्यास पुस्तक स्वरूप भवानी विश्वनाथ के चरणो मे सादर

समर्पित है–

श्रीन्द्रदत्तेन संदृब्धैः धृतैः नारायणेन वै।
शोधितैः रामचन्द्रेण साभिज्ञेति सुटीकया।।
राधिकारामयोः सूनुः गर्गवंशप्रदीपकैः।
ग्रन्थाब्जैः स्तौति पादाब्जं, भवानीविश्वनाथयोः।।

बसन्त पचमी
वि० स० 2057
29 जनवरी 2001

रजनीकान्त शुक्ल

प्राध्यापक–शिक्षाशास्त्र
राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ,
(मानित विश्वविद्यालय)
तिरुपति–517507 आन्ध्र प्रदेश

मंगलाचरणम्

सजलजलदनीलश्चूर्णकर्चूरचैल-
श्चिकुररुचिकपोलश्शीर्षतापिच्छचूडः।
शरदजलजनेत्रः कोऽपि बालो हृदीतात्
पुटकरटनकार्यो नूपुरो वेणुवेत्री।।

श्री कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्

व्याख्याकर्तु मगलाचरणम्

श्री गणेश नमस्कृत्य देवीं वाग्देवता गुरुम्।
लिख्यते रामचन्द्रेण श्रीन्द्रदत्तकृता स्मृति ।।
पित्रादिष्टाशिषा तस्य प्रकाशपथमागता।
ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे त्रयोदश्यादिवासरे।।
वसुशून्यद्वये पक्षे (२००८) पूर्व सग्रथिता यथा।
श्रद्धालु–सुखबोधाय टिकितस्तिथिनिर्णयः।।

अन्वय – सजल जलदनील चूर्णकर्चूरचैल, चिकुररुचिकपोल शीर्षतापिच्छचूड, शरदजलजनेत्र, नूपुरो वेणुवेत्री, कोऽपि बाल पुटकरटनकार्य हृदीतात्।

सजलजलदनील- जलेन सहित सजल = जलपूर्ण जल ददाति= वृष्ट्या लोक सिञ्चति, जलद पयोद। सजल जलद इव नील शरीर यस्य स। सजल जलद नील = वर्षर्तौ सान्द्र पयोदस्य जलमय मेघस्य छटा इव नील वर्ण श्री बाल कृष्ण।

चूर्णकर्चूरचैलः = चूर्णं कर्चूरस्य, तद्वत् पीत चैल वस्त्रं यस्य स, चूर्णकर्चूरचैल। कर्चूर = लोके कचूर इति प्रसिद्धौषधि। यथा कर्चूरचूर्ण, पीतवर्णं भवति, तद्वत् पीतवर्णं वस्त्र शोभते।

उक्तञ्च श्रीमद्भागवते – **पीताम्बरं, सान्द्रपयोदसौभगम्।**

चिकुररुचिकपोल· = चिकुरै केशै = कुञ्चितकेशै सुशोभित रुचि = आकर्षक '= आह्लादकारी कपोल- यस्य स रुचिर रुचिकपोल = कुञ्चितकेशावृत अतिशय मनोज्ञ हृदयहारी अद्भुत कपोलपूर्ण-।

शीर्षतापिच्छचूड· शीर्षस्य भाव शीर्षता = उच्चता, अथवा शीर्षभागे स्थिता या पिच्छस्य कान्ति तया शोभिता चूडा यस्य, स शीर्षता पिच्छचूड। काकपच्छ मध्य शिरोभागे चूडा (चोटी) शिखा मयूरपक्षशोभिता, हरति हृदयम् बाल शिरोभागे उभयतो लम्बमाना केशा कपोलाच्छादका काकपच्छ शब्द वाच्या । श्रीबालकृष्णस्य शिरसि रचिता मयूरपिच्छान्विता उर्ध्वभागे स्थिता चूडा (चोटी), कान्तिमयी कस्य हृदय नाकर्षति। उक्तञ्च श्रीमद्भागवते **'वर्हापीडम्' ''विभ्रद्वास कनककपिश''।**

शरदजलजनेत्र शरद ऋतौ जलाशये जात पद्म इव नेत्रे यस्य स । तदुक्तम् श्रीमद्भागवते **'तमद्भुतम् वालकमम्बुजेक्षणम्। शरदुदाशये साधु जात सत् सरसिजोदर श्री मुषादृशाः इति गोपीभिरुक्तम्।**

नूपुरो वेणुवेत्री = नूपुर = पादालङ्कृतभूषण वेणुवेत्री तेन शोभित वेणु वाद्यविशेष, वेत्रम् अस्ति अस्य वेणुवेत्री = वेत्र करतलधारी नूपुराभरणशोभालङ्कृत ।

कोऽपि बालः = वर्णनातीत, अनिर्वचनीय, अद्भुत बाल अनुभवानन्दरुप ।

पुटकरटनकार्यः = पुटकेहृत्सम्पुटे, रटनकार्य इति रटनीय स्मरणीय, यद् वा करपुटकेन जपनीय । अथवा खेचरी मुद्रया उपाशुना मुखसम्पुट स्थितया रसनया शनै शनै कीर्तनीय पुन पुनरभ्यसन रटनम्। श्रीकृष्ण एव रटनकार्य ।

हृदीतात् = हृदि हृदये इतात् समागम्यात् वा तिष्ठतात् अथवा प्रार्थ्यते यद् बालच्छविधारी श्री कृष्णो मन्मनसि सदा गोचरी भवतु। इति

अभिज्ञा : बाल रूप धारी श्री कृष्ण चन्द्र मेरे हृदय मे निवास करे। उनकी शोभा अवर्णनीय है। वर्षा ऋतु मे जल से परिपूर्ण बादल के समान उनकी शरीर नीलवर्ण है। उनके शरीर पर सुशोभित वस्त्र कचूर के चूर्ण समान पीले वर्ण का है। सुन्दर उन्नत मासल, मसृण कपोल, कुञ्चित (घुघराले) केशा से सुशोभित है। माता के द्वारा लम्बे–लम्बे केशों की चोटी बनाकर शिर के ऊपर चोटी मे मयूर पख का लगा हुआ सुन्दर मुकुट अथवा ऊचा शिर पर मयूर पख सुशोभित हो रहा है। ऐसी अद्भुत छटाधारी श्री कृष्ण मन और वाणी से परे योगी ध्यानगम्य भक्तिवश्य मेरे मन मे दृष्टिगोचर होवे।

तिथि-निर्णय :

नानानिबन्ध समालोक्य सविचार्य स्वय बुध
श्रीन्द्रदत्तः करोत्येता स्मृतिसिद्धान्तचन्द्रिकाम्।
तिथिशुद्धि समाचार शास्त्रे यत् सुविचारितम्
भृग्वादीना मुनीनां तत्संगृह्णामि यथामतिः।।
तदादौ तिथयो निर्णीयन्ते।।
सूर्योदयमारम्भ यावद् दिनमानस्तदुपपर्यन्त
चेद्भवेयुस्तदा निःसन्देहेन पूर्णा. कार्य्याहाः।
अपूर्णत्वे तु यथा–
युग्माग्नि क्रतुभूतानि, षण्मुनयोर्वसुरन्ध्रयोः।
रुद्रेण द्वादशी युक्तान्*, चतुर्दश्या च पूर्णिमा।।
प्रतिपदा त्वमावस्या तिथ्योर्युग्मं महाफलम्।
एतद् व्यस्तं महादोषं हन्ति पुण्यं पुरा कृतम्।।
पूर्वतिथिरुत्तरातिथि विद्धा ग्राह्या।
उत्तरा च पूर्वविद्धेति वेदस्वरूपमाह*।

अभिज्ञा . महर्षि भृगु एव अन्यान्य मुनियो द्वारा शास्त्रो मे जो विचार करके व्रत उपवास हेतु शुद्ध तिथियो का निश्चय किया गया है उसका विचार करके मै इन्द्रदत्त सुकुल स्वमति के अनुसार सग्रह करके इस **"स्मृति सिद्धान्त चन्द्रिका"** नामक ग्रन्थ की रचना कर रहा हूँ।

तिथि निरुपण यदि तिथि सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त के पश्चात् भी रहे तो वह व्रत मे पूर्ण मानी जाती है। कार्य करने योग्य है। यदि तिथि अपूर्ण है तो युग्म तिथि का विचार करना चाहिए। अर्थात् द्वितीया–तृतीया, चतुर्थी–पञ्चमी, षष्ठी–सप्तमी, अष्टमी–नवमी, एकादशी–द्वादशी, चतुर्दशी–पूर्णिमा, प्रतिपद–अमावस्या ये युग्म हैं इसके विपरीत तिथियो मे विहित कर्म पूर्व पुण्य का विनाशक हैं।

पूर्व तिथि परविद्धा, और उत्तर तिथि पूर्वविद्धा कही जाती है। वेदस्वरूप मुनि ने इसे उक्त युग्म तिथि का परस्पर वेध ग्राह्य कहा है।

---

१ व्यस्तम्-अन्यथाकृतम् इति। विपरीतम् इवि भाव । *केचित् युक्ता, वेधस्वरूपमाह इति।

पक्षद्वयेऽपि तिथयस्तिथि पूर्वान्तथोत्तराम्।
त्रिभिर्मुहूतैर्विद्धयन्ति सामान्योऽयं विधि· स्मृत ।।

अभिज्ञा· दोनो पक्षो मे सूर्योदय से तीन मुहूर्त तक रहने वाली तिथि पर तिथि को विद्ध करती है। सूर्यास्त से पूर्व तीन मुहूर्त की तिथि पूर्व तिथि को विद्ध करती है। यह सामान्य नियम है।

प्रतिपत्

यस्मिन्दिने सूर्योदयानन्तरममावस्यापि त्रिमुहूर्ता ततोऽधिका वा चेत् तदा प्रतिपद विध्यति। अस्तात् प्राक् त्रिमुहूर्ता ततोऽधिका वा द्वितीया चेत्सापि प्रतिपदं विध्यति।

तत्रोभये पक्षे युग्मवाक्यबलाच्छुक्लप्रतिपत्पूर्वैव, कृष्णे तु परैव। युग्मवाक्ये अष्टकला षोडशकला वा एवं संग्रहात् चैत्रे कृष्ण प्रति पत्पूर्वविद्धैव ग्राह्या।

अभिज्ञा : सूर्योदय के अनन्तर तीन मुहूर्त या अधिक अमावस्या हो तो प्रतिपदा तिथि को वेध करती है अर्थात् वह अमावस्या प्रतिपद विद्धा कही जायेगी। इसी प्रकार सूर्यास्त के पूर्व दो या तीन मुहूर्त द्वितीया तिथि रहे तो प्रतिपद तिथि को विद्ध करती है।

युम्मवाक्य के अनुसार शुक्लपक्ष का प्रतिपद पूर्व मान्य है। कृष्णपक्ष मे परा ग्राह्य है।

चैत्र कृष्ण प्रतिपद पूर्व विद्धा ही ग्राह्य है। अर्थात् पूर्णिमा विद्धा मान्य है।

होलिकायाः विषये। नास्या कृत्यस्य तदनन्तरमेव कर्त्तव्यत्वात् (= कृत्यस्य)। अत्र कृत्यमुक्त **भविष्ये।**

अभिज्ञाः होलिका के विषय मे कृत्य कर्म उसके बाद ही अर्थात् अव्यवहित दिन मे करणीय है। इस विषय में भविष्य पुराण का यह वचन प्रमाण है—

चैत्रे मासि महाबाहो पुण्या प्रतिपदा भवेत्।
यस्तस्यां श्वपचं स्पृष्ट्वा स्नानं कुर्य्यान्नरोत्तमः।।

न तस्य दुरित किञ्चिन्नाधयो व्याधयो नृप।
दिव्य नीराजने तद्धि सर्वरोगविनाशनम्।।
प्रात धारयेद् होला सर्वदुष्टोपशान्तये।

अभिज्ञा चैत्र कृष्ण प्रतिपदा को श्वपच स्पर्श के पश्चात् स्नान करना चाहिए। पाप की शान्ति व आधि–व्याधि का शमन होता है। आगे वचन है **नवरात्रारम्भस्तु शुद्धे एव**– इससे भी स्पष्ट है कि होलिका दहन के पश्चात् दूसरे ही दिन प्रतिपद–शुद्ध हो या पूर्णिमा विद्धा हो वही धूलि वन्दन मे ग्राह्य है द्वितीया विद्धा ग्राह्य नहीं है। **प्रतिपदि उदिते रवौ** इस वचन का भाव शुद्ध प्रतिपद के अभाव मे सूर्यास्त पूर्वप्रतिपद् ही ग्राह्य है "**उदिते रवौ प्रतिपदि धूलिवन्दनम् कार्यम् इति भाव**" **अन्यथा पूर्वविद्धैव कर्तव्या** इस वचन से विरोध होने से एक वाक्यता नहीं होगी।

वसन्तोत्सव को साय धूलि वन्दन के पश्चात् रसाल की मञ्जरी पीने योग्य है। मत्र इस प्रकार है–

चूतमग्र्य वसन्तस्य माकन्दं कुसुमं तव।
सचन्दनं पिबाम्यद्य सर्वकामार्थसिद्धये।।
पुराणसमुच्चये-
वृत्ते तुषार समये सितपञ्चदश्या
प्रातर्वसन्तसमये समुपस्थिते च।
संप्राश्य चूत कुसुमं सह चन्दनेन
सत्यं हि पार्थ पुरुषोऽथ समाः सुखी स्यात्।।
वन्दयेद्धोलिकां भूति सर्वदुष्टोपशान्तये।

अभिज्ञाः पूर्णिमा मे होलिका दहन के अनन्तर ही प्रात काल इस कृत्य का विधान हैं।

मन्त्रस्तु-वन्दितासीति।
वन्दितासि सुरेन्द्रेण ब्रह्मणा शंकरेण च।
अतस्त्वं पाहि नो देवि विभूते भूतिदा भव।।
तत्रैव कृत्यान्तरं।

यत्पिबन्ति बसन्तस्य चूतमग्ग्रम् सचन्दनम्।
सत्य हृत्स्थस्य कामस्य पूजेय क्रियते नरै ।।

अभिज्ञा .– शिशिर ऋतु के पूर्णिमा तिथि मे समाप्त हो जाने पर प्रात वसन्तोत्सव मे चन्दन के साथ आम्र मञ्जरी पीस कर पीने से दीर्घायु प्राप्त होती है और उसी दिन होलिका विभूति धारण करना चाहिए।

अथ चैत्रशुक्लप्रतिपत् वत्सरारम्भः।
सा चोदय व्यापिनी ग्राह्या।
चैत्रे मासि जगद्धाता ससर्ज प्रथमेऽहनि।
शुक्ले पक्षे समग्रन्तु तदा सूर्योदये सति।। इति हेमाद्रौ ब्राह्मवचनात्
उभयदिने व्याप्ताव्याप्तौ पूर्वैव।
वत्सरादौ वसन्तादौ वलिराज्ये तथैव च।
पूर्वविद्धैव कर्तव्या प्रतिपत्सर्वदा वुधैः।। इति वृद्धवशिष्ठोक्ते ।
युग्मवाक्याच्च। अत्र तैलाभ्यंगो नित्यः।
वत्सरादौ वसन्तादौ वलिराज्ये तथैव च।
तैलाभ्यगमकुर्वाणो नरक प्रतिपद्यत।। इति वशिष्ठवचनात्।
चैत्रस्य मलमासत्वे तु तत्रैव वत्सरारम्भः।
तत्रैव तस्या एव तिथेर्वर्षप्रवृत्ति.।

अभिज्ञा – यह नये वर्ष के आरम्भ के आरम्भ की तिथि है। यह सूर्योदय व्यापिनी ग्राह्य है।

पितामह ब्रह्मा ने चैत्र शुक्ल प्रथम दिवस को सृष्टि की रचना प्रारम्भ किया। सूर्योदय मे प्रतिपद होना चाहिए। यदि दोनो दिन सूर्योदय में प्रतिपद रहे या दोनो दिन सूर्योदय मे प्रतिपद का अभाव हो जाय तो युग्म वचन से पूर्व दिन अमा विद्ध प्रतिपद से ही नये वर्ष का आरम्भ मान्य है। प्रमाण मूल मे उद्धृत है। इस तिथि को तैलाभ्यग का विधान है। युग्म वाक्य मे अमावस्या प्रतिपदा युग्म है।

यदि चैत्र का प्रथम पक्ष अधिक मास मे पड जाये तो वही से नये वर्ष का प्रारम्भ होता है।

नवरात्रारम्भस्तु शुद्धे एव। नवरात्रारम्भे प्रतिपत्परयुतैव।
अमायुक्ता न कर्तव्या प्रतिपद चण्डिकार्चने।
मुहुर्तमात्रा कर्तव्या द्वितीयान्तु गुणान्विता इति।। देवी पुराणोक्ते।
अस्यामेव प्रपादानं।

भविष्ये—

अतीते फाल्गुने मासि प्राप्ते चैत्रे महोत्सवे।
पुण्येऽह्नि विप्रकथिते प्रपादान समारभेत्।।
प्रपेय सर्व सामान्या भूतेभ्य· प्रतिपादिता।
अस्या. प्रदानात्पितरस्तृप्यन्तु हि पितामहाः।।
अनिवार्य ततो देयं जल मासि चतुष्टये।
तथा प्रपादातुमशक्तेन विशेषाद्धर्ममीप्सुना।।
प्रत्यह धर्मघटको वस्त्रसंवेष्टिताननः।
ब्राह्मणस्य गृहे देयः शितामल जलश्शुचि।

दाने मन्त्रः—
एष धर्म घटो दत्तो ब्रह्मा विष्णु शिवात्मक.।
अस्य प्रदानात् सफला मम सन्तु मनोरथा·।। इति।
अनेन विधिना यस्तु धर्म्मकुम्भं प्रयच्छति।
प्रपादानफलं सोऽपि प्राप्नोतीह न संशय·।। इति।

अभिज्ञा :— नवरात्र का प्रारम्भ शुद्ध प्रतिपद अर्थात् सूर्योदय मे प्रतिपद रहे तभी किया जाय। नवरात्र मे द्वितीया विद्धा प्रतिपद ग्राह्य है। वचन मूल मे उद्धृत है।

इस तिथि से प्रपादान (पौसला) प्रारम्भ होता है। वचन मूल मे उद्धृत है। प्रपादान से पितर प्रसन्न होते है। अत चैत्र से आषाढ पूर्णिमा तक चार माह पर्यन्त पौसला देना चाहिए। यदि चार माह तक प्रपादान की शक्ति न हो तो मधुर निर्मल जल से परिपूरित वस्त्राच्छादित धर्म घट ब्राह्मण को दान देवे। मत्र मूल मे उद्धृत है। इस घट दान से भी प्रपादान का पुण्य प्राप्त होता है।

आश्विनशुक्लप्रतिपदि नवरात्रारम्भ ।
सा च पूर्वाह्नव्यापिनी ग्राह्या।
आश्विनस्य सिते पक्षे नवरात्रमुपोषित ।
सुस्नात तिलतैलेन पूर्वाह्ने पूजयेच्छिवाम्।। इति वचनात्।
अमायोगो वर्जित·।
देशद्रोह भवेत्तत्र दुर्भिक्ष चोपजायते।
नन्दाया दर्शयुक्तायां यत्र स्यान्मम पूजनम्।। इति देवीपुराणात्।
आद्य नाडीषोडशके कलश स्थापयेत्।
आद्या· षोडशनाडीस्तु त्यक्त्वा य कुरुते नर ।
कलश स्थापनं तत्र ह्यरिष्टं जायते ध्रुवम्।। इति देवीपुराणोक्ते ।
रात्रौ कलशं न स्थापयेत्।
न रात्रौ स्थापन कार्य न कुम्भाभिषेचनम्। इति मत्स्यपुराणात्।
अत्र चित्रा धृति योगस्त्याज्य·।

यद्वा पादद्वयं वा त्याज्यम् चित्रा वैधृति सम्पूर्णा प्रतिपच्चेद्भवेन् नृप।
त्याज्या· ह्यंशास्त्रयस्त्वाद्यास्तुरीयांशे च पूजनम्।। इति भविष्योक्ते ।

"प्रतिपद्याश्विने मासि भवेद् वैधृतिचित्रयो ।
आद्य पादौ परित्यज्य प्रारम्भेन्नवरात्रकम् ।।" इति कात्यायनोक्ते ।

अभिज्ञा – अश्विन शुक्ल प्रतिपद् नवरात्रारम्भ सूर्योदय व्यापिनी तिथि ग्राह्य है। अमावस्या युक्त प्रतिपद् देवी पूजन मे वर्जित है।

यदि दोनो दिन सूर्योदय मे प्रतिपद है तो पूर्व दिन ही ग्राह्य है। अन्यथा द्वितीया विद्धा प्रतिपद् प्रशस्त है।

देवी पुराण का वचन है– अमावस्या युक्त प्रतिपद तिथि मे पूजन करने से अकाल पडता है। प्रतिपदा मे सोलह दण्ड के अन्दर ही कलश स्थापन का विधान है। रात्रि मे कलश स्थापन नहीं करना चाहिए। चित्रा नक्षत्र तथा वैधृति योग कलश स्थापन मे वर्जित है। यदि यावत् दिन चित्रा वैधृति रहे तो तीन अश का त्याग करके चतुर्थ अश मे कलश स्थापन करने का विधान है। अभिजित मुहूर्त मे कलश स्थापन किया जा सकता है।

कार्तिक शुक्लप्रतिपद्।
प्रतिपद् दर्शयुता सयोगे क्रीडनं तु गवां मतम्।
परविद्धे तु य· कुर्यात् पुत्रदारा धनक्षयम्। इति देवल।
पूर्वविद्धा प्रकर्तव्या शिवरात्रिर्बलेर्दिनम्। इति वृहद्यमोक्तेश्च।
अत्र विशेष स्कान्दे—
प्रातर्गोवर्धन पूज्यो द्यूतं वापि समारभेत्।
पूजनीयास्तथा गावस्त्याज्ये वाहन दोहने।। मन्त्रश्च—
गोवर्धनधराधीश गोकुला त्राणकारक।
वहुवाहु कृतछाय गवां कोटिप्रदो भव।। गोपूजा मन्त्रस्तु—
लक्ष्मीर्या लोकपालानाम् धेनुरूपेण संस्थिता।
घृत वहति यज्ञार्थे मम पाप व्यपोहतु।।
अत्र द्यूत स्त्रिया सह, हेमाद्रौ ब्राह्मे—
तस्माद्यूत प्रकर्तव्यम् प्रभाते तत्र मानवै।
तस्मिन् द्यूते जयो यस्य तस्य संवत्सरे जय·।।
पराजयो विरुद्धश्च लाभनाशकरो भवेत्।
दयिताभिश्च सहितैर्नेया सा च भवेन्निशा।। देवी पुराणेऽपि—
जितश्च शकरस्तत्र जयं लेभे च पार्वति।
तत्र शिवेन सहिता गौरी नित्य सुखोषिता।। इति।

अभिज्ञा ·- कार्तिक शुक्ल प्रतिपद—अमावस्या युक्त प्रतिपद ग्राह्य है द्वितीया विद्धा प्रतिपद् पुत्र, कलत्र हानिकर है। यह देवल का वचन है।

वृहद्यम के वचनानुसार **शिवरात्रि** पूर्व विद्धा ग्राह्य है। प्रात गाय का पूजन एव द्यूत क्रीडा विहित है। इस दिन गाय का दूहना व बैल को हल मे जोतना वर्जित है। प्रात गोवर्धन पूजा की जाती है।

गोवर्धन गिरि की पूजा की जाती है मत्र मूल मे उद्धृत है। गोकुल की रक्षा करने वाले पर्वत राज गोवर्धन अनेक वाहुवाले छाया से कष्ट निवारक असख्य गौ प्रदान करे। गाय का पूजा करने का मत्र मूल मे उद्धृत है— लक्ष्मीर्या लोकपालानाम् . इति

स्त्री के साथ द्यूत क्रीडा विहित है। जो विजयी होता है उसका लाभ सम्पूर्ण वर्ष तक होता रहता है। पराजय हानिकर है। देवीपुराण का वचन है कि— शकर जी एव पार्वती जी बारी—बारी से विजयी होकर सुख प्राप्त किये।

द्वितीया

अथ द्वितीया। तत्र प्रातस्त्रिमुहुर्ता ततोऽधिका वा परा ग्राह्या। द्वितीया तृतीया विध्यन्ति। परेद्युश्चास्तमयात् प्राक् त्रिमुहूर्ता ततोऽधिका तृतीया पूर्वा विध्यन्ति।

पूर्वेद्युरसती प्रातः परेद्युस्त्रिमुहूर्तगा।
सा द्वितीया परोपोष्या पूर्वविद्धा ततोऽन्यथा।। माधव ।
एवं चोभयविद्धापि द्वितीया परा ग्राह्या।। युग्मवाक्यात्
श्रावणकृष्णद्वितीया वृहत्तपा, सा च पूर्वा।
कृष्णाष्टमी वृहत्तपा या सावित्री वटपैत्रिकी।
काम त्रयोदशी, रम्भा कर्तव्या संमुखी तिथिः।। इति। सवर्तकोक्ते
कार्तिकशुक्लद्वितीया यम द्वितीया सा चापराह्नव्यापिनी ग्राह्या।
उर्जे शुक्ले द्वितीयायामपराह्नेऽर्चयेद्यमम्।
स्नान कृत्वा भानुजायां, यमलोकं न पश्यति।। इति। स्कान्दोक्ते
यमो यमुनया पूर्वं भोजितस्स्वगृहेऽर्चितः।
अस्यां निजगृहे विप्र न भोक्तव्य कदाचन।।
स्नेहेन भगिनी हस्ताद् भोक्तव्य पुष्टिवर्धनम्।
दानानि च प्रदेयानि भगिनीभ्यो विधानतः।। इति। भविष्योक्ते

अभिज्ञा ·— यह माधव ने कहा है कि प्रात दो या तीन मुहूर्त भी द्वितीया रहे तो पराग्राह्य है अर्थात् पूर्व दिन प्रतिपद विद्धा ग्राह्य नहीं है। युग्मवाक्य तृतीया द्वितीया कह चुके हैं। सूर्योदय की द्वितीया तृतीया को तथा सूर्यास्त मे रहने वाली द्वितीया तृतीया तिथि को विद्ध करती है।

श्रावण कृष्ण द्वितीया को वृहत्तपा कहते हैं।

श्रावण कृष्ण द्वितीया— वृहत्तपा, श्रावण कृष्ण द्वितीया, सावित्री तद् व्रत—सम्बन्धी पूर्णिमा—वट पैत्रिकी, तद् व्रत सबधी—अमावस्या तिथि, काम त्रयोदशी = चैत्र शुक्ल त्रयोदशी, रम्भा = ज्येष्ठ शुक्ल तृतीया यह पूर्वा ग्राह्य है। साय व्यापिनी कार्यकाल इसका है। कार्तिक शुक्ल द्वितीया सायकाल व्यापिनी होनी चाहिए।

कार्तिक शुक्ल द्वितीया को यमुना जी मे स्नान करके अपराह्न मे यम की पूजा करने से यमराज का भय नही होता है। यह स्कन्दपुराण का वचन है।

यमुना जी ने अपने भाई यमराज की अपने घर मे पूजा किया था। इस तिथि को भाई को अपने घर भोजन न करके भगिनी के घर भोजन करना चाहिए।

मन्त्रार्थ = कार्तिक शुक्ल द्वितीया तिथि को साय यमराज की पूजा करनी चाहिए। **हेमाद्रि के मत से** यम द्वितीया मध्याह्न व्यापिनी पूर्वविद्धा ग्राह्य है।

प्रेम पूर्वक बहिन के घर भोजन करना श्रेयस्कर है तथा यथा शक्ति बहिन को वस्त्रालकार देना चाहिए।

तृतीया

अथ तृतीया। वेधश्च प्रतिपदादिनिर्णयदर्शितरीत्या वोध्य । सर्वमते रम्भा व्यतिरिक्ता परैव।। तदुक्त स्कन्दे–

द्वितीयया च विद्धा तु न तृतीया कदाचन।
कर्तव्या व्रतिभिस्ता गणयुक्ता प्रशस्यते।।
विहाय एकां च रम्भा तृतीया पुण्यवर्धिनीमिति।

अभिज्ञा – द्वितीया विद्धा तृतीया युग्म वचन के अनुसार जानना चाहिए। रम्भा–ज्येष्ठ शुक्ल तृतीया के अतिरिक्त अन्य तृतीया परा ग्राह्य है।

स्कन्द पुराण के अनुसार व्रत मे द्वितीया तृतीया विद्धा नही होना चाहिए। गण = चतुर्थी युक्त तृतीया ग्राह्य है रम्भा व्रत पूर्वा ग्राह्य है।

वैशाखशुक्लतृतीया – अक्षय तृतीया
सा च पूर्वाह्नव्यापिनि ग्राह्या।
द्वे शुक्ले द्वे तथा कृष्णे युगादी कवयो विदु ।
शुक्ले पौर्वाह्निके ग्राह्ये कृष्णे चैवापराह्निके।। इति नारदोक्ते

वैशाखस्य तृतीयां य पूर्वविद्धां करोति वै।
हव्य देवा न गृह्णन्ति कव्यत्वं पितरस्तथा। इति गोभिलोक्तेश्च।

अभिज्ञाः– वैशाख शुक्ल तृतीया अक्षय तृतीया कही जाती है। यह सूर्योदय व्यापिनी ग्राह्य है। द्वे शुक्ले – वैशाख शुक्ल तृतीया तथ्ज्ञ कार्तिक शुक्ल नवमी पूर्व ग्राह्य है। द्वे कृष्णे– भाद्र कृष्ण त्रयोदशी, माघ कृष्ण अमावस्या युगादि तिथि अपराह्न व्यापिनी ग्राह्य है। यह नारद का वचन है।

पूर्व तिथि द्वितीया विद्धा नहीं करनी चाहिए। देवता हव्य और पितर कव्य स्वीकार नही करते हैं। गोभिल।

अर्थ – मेष सक्रान्ति, कर्क सक्रान्ति, मकर सक्रान्ति तथा युगादि तिथियो मे पिण्डदान रहित श्राद्ध करना चाहिए। रात्रि भोजन निषिद्ध है।

बैशाख शुक्ल तृतीया परशुराम जयन्ती है। रात्रि के प्रथम प्रहर पुनर्वसु नक्षत्र मे रेणुका के गर्भ से परशुराम के रूप मे भगवान ने अवतार लिया। स्कन्दपुराण।

दिनद्वये तदा व्याप्तावशत· समव्याप्तौ च परा, अन्यथा पूर्वैव।
शुक्ला तृतीया बैशाखे शुद्धोपोष्या दिनद्वये।
निशाया पूर्वयामे चेदुत्तरान्यत्र पूर्विका।। इति। भविष्योक्ते।
ज्येष्ठशुक्लतृतीया सा च पूर्वैव, प्रागुदाहृत स्कन्दसंवर्तवाक्यात्।
भाद्रशुक्लतृतीया हरितालिका सा परा ग्राह्या।
द्वितीया शेष संयुक्ता या करोति विमोहिता।
सा च वैधव्यमाप्नोति प्रवदन्ति मनीषिण।। इति दिवोदास।
मुहूर्तमात्रसत्त्वेऽपि दिने गौरीव्रत परम्।। इति माधवोक्तेश्च।

अभिज्ञा .– यदि दोनो दिन समान रुप से तृतीया मिले तो परा अन्यथा पूर्वा ग्राह्य है।

वैशाख शुक्ल तृतीया शुद्धा ग्राह्य है। दोनो दिन रात्रि के पूर्व प्रहर मे मिले तो पर दिन अन्यथा पूर्व दिन ग्राह्य है। भविष्य पुराण।

ज्येष्ठ शुक्ल तृतीया रम्भा व्रत है। यह पूर्वा ग्राह्य है।

भाद्र शुक्ल तृतीया.- हरितालिका व्रत परा ग्राह्य है। द्वितीया विद्ध नहीं होनी चाहिए। लवमात्र भी सूर्योदय मे द्वितीया हो तो उस तृतीया व्रत को करने वाली स्त्री वैधव्य प्राप्त करती है। यह दिवोदास का मत है। माधव के अनुसार सूर्योदय मे मुहूर्त मात्र भी तृतीया रहने पर **गौरी व्रत** करना चाहिए।

चतुर्थी

अथ चतुर्थी।

सा च परविद्धा ग्राह्या, युग्मवचनात्।

गणेशव्रते तु पूर्वैव ग्राह्या।

चतुर्थी तु तृतीयाया महापुण्यफलप्रदा।

कर्तव्या व्रतिर्भिवत्स गणनाथ सुतोषिणीति।

गोविन्दार्णवे, व्रह्मवैवर्ते च।

इय चतुर्थी प्रतिमासे भवति।

अभिज्ञा – चतुर्थी पर विद्धा ग्राह्य है। गणेश व्रत मे तृतीया विद्ध चतुर्थी मान्य है। गणेश व्रत मे तृतीया युक्त चतुर्थी गणेश जी को प्रसन्न करने वाली है। क्योकि तृतीया गौरी व्रत है और चतुर्थी गणेश जी का व्रत है। प्रत्येक मास मे चतुर्थी तिथि को गणेश पूजा किया जाता है।

श्रावण चतुर्थी सङ्कटाख्या सा चन्द्रोदय व्यापिनी ग्राह्या।

श्रावणे वहुले पक्षे चतुर्थ्या च विधूदये।

गणेश पूजयित्वा च चन्द्रायार्घ प्रदीयते।।

तस्मिन्दिने व्रत कार्य सकटाख्य सुरेश्वरी।

उभयदिने व्याप्ताव्याप्तौ तदभावे वा पूर्वैव।

तृतीया मातृविद्धा गणेश्वर इति युग्मवाक्यात्।

भाद्रकृष्णा चतुर्थी बहुला, सापि पूर्वैव।

पुराणसमुच्चये–

गौर्याश्चतुर्थी वट धेनुपूजा दुर्गार्चनं दुर्भर होलिके च।

वत्सस्य पूजा शिवरात्रिरेताः परा विनिध्नन्ति नृपं सराष्ट्रम्।। इति।

अभिज्ञा – श्रावण कृष्ण सकष्टी चतुर्थी चन्द्रोदय व्यापिनी होनी चाहिए। चतुर्थी दोनो दिन चन्द्रोदय व्यापिनी रहने पर मातृविद्धा होने से पूर्व दिन ग्राह्य है। गणेश जी की पूजा करके चन्द्रमा को अर्घ्य देना चाहिए।

भाद्र कृष्ण चतुर्थी बहुला व्रत है। यह पूर्व दिन ही ग्राह्य है। वट सावित्री, गौरी चतुर्थी, धेनुपूजा = बहुला व्रत, दुर्गा पूजा, वत्सपूजा =

कार्तिक कृष्ण द्वादशी, शिवरात्रि यह पर दिन करने से राष्ट्र सहित राजा की हानि होती ह।

भाद्रशुक्ला वरदचतुर्थी

सा च मध्याह्नव्यापिनी ग्राह्या। उभयत्र मध्याह्नव्याप्तौ परैव।

चतुर्थी गणनाथस्य मातृविद्धा प्रशस्यते।

मध्यह्नव्यापिनी कुर्यात् परश्चेत्परेऽहनि।। इति माधव वृहस्पति ।

अत्र चन्द्रदर्शन निषिद्धम्।

तदाह मार्कण्डेये–

सिहादित्ये शुक्ल पक्षे चतुर्थी स्वाति योगिनी।

मिथ्याभिशाप कुरुते दृष्टचद्रान्न संशय ।।

कन्यादित्ये चतुर्थी तु शुक्ले चन्द्रस्य दर्शनम्।

मिथ्याभिशाप कुरुते तस्मात् पश्येन्न त तदा।। तद्दोषशान्तये–

सिह प्रसेनमवधीत् सिहो जाम्बवता हत ।

सुकुमारकमारोदीस्तवह्येष स्यमन्तक इति वै पठेत्।।

अभिज्ञा - वरद चतुर्थी मध्याह्न व्यापिनी ग्राह्य है। दोनो दिन मध्याह्न मे रहने पर परा ग्राह्य है। चतुर्थी का चन्द्र दर्शन निषिद्ध है। **मार्कण्डेयपुराण** के अनुसार सिह का सूर्य हो तो या कन्या का सूर्य हो, भाद्र शुक्ल चतुर्थी को चन्द्र दर्शन होने से मिथ्यापवाद लगता है। यदि नेत्र गोचर हो जाये तो सिह प्रेसन मत्र का जप करे। सम्भव हो तो सत्राजित के मणि से सम्बन्धित कथा श्रवण करे।

कार्तिकशुक्लचतुर्थ्या नागव्रतमिति, कालादर्श·।

सा च मध्याह्नव्यापिनी ग्राह्या।

तदुक्तम् पुराणसमुच्चये–

युगं मध्यं दिने यत्र तत्र चोपोष्य पन्नगान्।

क्षीरेणाव्याप्य पञ्चम्यां पूजयेत् प्रयतो नरः।।

अभिज्ञाः– चतुर्थी को नाग व्रत होता है। कालादर्श यह मध्याह्न व्यापिनी मान्य है।

मध्याह्न मे युगचतुर्थी तिथि रहने पर उपवास करके सर्पो का पूजन करे। गो–दूध से सींचे। पञ्चमी मे पूजन करे। यह पुराण समुच्चय का वचन है।

माघशुक्लकुन्दचतुर्थी।
कुन्दपुष्पै नक्ताशी शिव सपूजयेत्।
माघशुक्लचतुर्थ्यान्तु कुन्दपुष्पै सदा शिवम्।
सपूज्य यो हि नक्ताशी स प्राप्नोति श्रिय नर ।। इति कालादर्श
कूर्मवराहपुराणयोरुक्तम् इयमेव गौरी चतुर्थीत्युच्यते।
सा च पूर्वैव।
मुहूर्तमात्रसत्त्वेऽपि दिने गौरी, व्रत पर
प्राग्लिखितवाक्यात् इय च तिलचतुर्थी।
सा च प्रदोष व्यापिनी ग्राह्या।
नक्तव्रतम्। तदुक्त काशीखण्डे–
माघशुक्लचतुर्थ्यान्तु नक्तव्रतपरायण ।
ये त्वा ढुण्ढेऽर्चयिष्यन्ति तेऽर्च्या स्युरसुरद्रुहाम्।।
शुक्लास्तिलान् गुणैर्वद्धान् प्राशयेल्लड्डुकान् व्रति। इति।

अभिज्ञा - माघशुक्ल चतुर्थी कुन्द चतुर्थी, को कुन्द पुष्पो से शिव की पूजा करके रात्रि को भोजन करे। माघ शुक्ल चतुर्थी को उपवास पूर्वक कुन्द पुष्प से शिव की पूजा करके जो रात्रि मे भोजन करता है उसे लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। यह कालादर्श का वचन है।

यही चतुर्थी **गौरी चतुर्थी** नाम से प्रसिद्ध है। यह पूर्वा ही ग्राह्य है। सूर्योदय मे मुहूर्त मात्र चतुर्थी होने पर गौरी व्रत किया जाय।

यही तिल चतुर्थी है। वह प्रदोष व्यापिनी ग्राह्य है।

ढुण्ढी गणेश की पूजा की जाय, रात्रि को भाजन करे। सफेद तिल व गुड का लड्डू बनाकर चढावे तथा व्रती स्वय भी खाये। काशी खण्ड मे यह कहा गया है।

पञ्चमी

अथ पञ्चमी

सा च चतुर्थी विद्धा सायाह्न व्यापिनी ग्राह्या।

चतुर्थी सहिता कार्या पञ्चमी परया न तु।

देवे कर्मणि पित्र्ये च शुक्लपक्षे तथासिते।। युग्मवाक्यात्।

अभिज्ञा – चतुर्थी विद्धा सायाह्न व्यापिनी पञ्चमी ग्राह्य ह। शुक्ल पक्ष तथा कृष्ण पक्ष मे देव तथा पितृ कर्म मे चतुर्थी सहिता परापचमी ग्राह्य नही है यह धर्म सिधु का वचन है।

श्रावणशुक्ला पञ्चमी। नाग पञ्चमी

सा तु पराह्न व्यापिनी ग्राह्या। तदुक्त चितामणौ–

पञ्चमी नागपूजायां कार्या षष्ठी समन्विता।। इति।

अत्र कृत्य भविष्योत्तरे–

श्रावणे मासि पञ्चम्यां शुक्लपक्षे नराधिप।

द्वारस्योभयतो लेख्या गोमयेन विषोल्वणा।

पूजयेद् विधिवद्वीर दधिदुर्वाङ्कुरैररि।। इति।

विषोल्वणाकोऽर्थ नागा। इयमालेख्य पञ्चमीत्युच्यते।

अभिज्ञा – श्रावण शुक्ल पञ्चमी नाग पञ्चमी जो पराह्न व्यापिनी ग्राह्य है। चितामणि का वचन है– नाग पूजा मे षष्ठी युक्त पञ्चमी होनी चाहिए। इसका विधान भविष्योत्तर पुराण मे है– श्रावण शुक्ल पञ्चमी को दीवाल पर दरवाजे के दोनो तरफ गोमय से सर्प बनाकर दूध दुर्वाङ्कुर आदि से उसकी पूजा करे। यह आलेख्य पञ्चमी कही जाती है। विषोल्वण = सर्प।

भाद्रशुक्ल पञ्चमी। ऋषि पंचमी, सा च मध्याह्न व्यापिनी।

पूजा व्रतेषु सर्वेषु मध्याह्नव्यापिनी।

इति विधिरिति हारीत माधवीयेप्येवम्। **ऋषि पञ्चमी षष्ठी युतैव** इति दिवोदास।

अभिज्ञा.– भाद्र शुक्ल पञ्चमी, ऋषि पञ्चमी, मध्याह्न व्यापिनी ग्राह्य है। हारीत व माधव का वचन है। दिवोदास ने भी कहा है ऋषि पञ्चमी षष्ठी सहित होनी चाहिए।

अत्र कृत्य ब्राह्मे–
वेदीं सम्यक्कुर्वीत गोमयेनोपलेपिताम्।
रगवल्ली विताना तु शुभ्रपुष्पोपशोभिताम्।।
तत्र सप्तर्षि दिव्या भक्तियुक्त प्रपूजयेत्।
कश्यपोऽत्रि भरद्वाजो विश्वामित्रोऽथ गौतम ।।
जमदग्निर्वशिष्ठश्च सप्तैते ऋषय स्मृता ।
अत्रानाकृष्ट भूमिशाकनीवाराहार ।

अभिज्ञा - मूल मे पूजन की विधि है। गोमयोपलिप्त भूमि पर पुष्प तोरण आदि से चौकी सजाकर कुशमय सप्तर्षि मण्डल की स्थापना करके विधिवत षोडशोपचार पूजन किया जाय। बिना जोते हुए खेत का शाक एव नीवार (तीनी चावल) आदि भोजन मे ग्राह्य है।

माघशुक्ला श्रीपञ्चमी।
भविष्योत्तरोक्ता, **उपवास । लक्ष्मी पूजा प्रधानम्।**
माघशुक्ला वसन्तपञ्चमी।
पुराणसमुच्चये–
माघमासे सुरश्रेष्ठ शुक्लाया पञ्चमी तिथौ।
रति कामौ तु संपूज्य कर्तव्य सुमहोत्सव ।
दानानि सम्प्रदेयानि तेन तुष्यति केशव.।।
इय मध्याह्नव्यापिनी पूजा व्रतत्वात्।

अभिज्ञाः माघशुक्ल पञ्चमी श्री पञ्चमी कही जाती है। भविष्य पुराण मे उपवास के लिए कहा गया है। यह लक्ष्मी पूजा प्रधान है। पुराण समुच्चय के अनुसार यह वसन्त पञ्चमी के नाम से विख्यात है।

रति एव कन्दर्प की पूजा का विधान है। यह मध्याह्न काल व्यापिनी पञ्चमी होनी चाहिए।

षष्ठी

अथ षष्ठी। स्कन्दव्रतादन्यत्र परैव युग्मवाक्यात्। तदाह भृगु–
एकादशाष्टमी षष्ठी पूर्णमासि चतुर्दशी।
अमावास्या तृतीया च ता उपोष्या परान्विता ।। स्कन्देऽपि–
नागविद्धा न कर्तव्या षष्ठी चैव कदाचन।
सप्तमी सहिता कार्या षष्ठी धर्मार्थचिन्तकै ।।
अत्र प्रात वेध षण्मुहूर्तात्मक । विशेषवाक्यात्।
यदाह– नागो द्वादश नाडीभिर्दुषयत्युत्तरातिथिमिति।
षष्ठी, प्रात षण्मुहुर्तन्यून पञ्चमी योगे तु पूर्वैव ग्राह्या।
अषाढशुक्ला स्कन्दषष्ठी। सा च पूर्व व्यापिनी ग्राह्या।
कृष्णाष्टमी, स्कन्दषष्ठी शिवरात्रेश्चतुर्दशी।
एता पुर्वयुता कार्यास्तिध्यन्ते पारण भवेत्।। इति स्कन्दोक्ते ।

अभिज्ञा – स्कन्दव्रत के अतिरिक्त अन्य षष्ठी परा मान्य है। स्कन्द के सबध मे स्कन्द पुराण का वचन हैं।

एकादशी, अष्टमी, षष्ठी, पूर्णिमा, चतुर्दशी, अमावस्या, तृतीया परा तिथि युक्त करनी चाहिये। ऐसा भृगु जी का वचन है।

पञ्चमी विद्धा षष्ठी नही करनी चाहिए। सप्तमी सहित षष्ठी धर्म कार्य मे मान्य है। प्रात छ मुहूर्त का वेध कहा गया है। यदि पञ्चमी छ मुहुर्त है तो षष्ठी दूसरे दिन किया जाय। यदि पञ्चमी १२ दण्ड से कम हो तो पूर्व दिन ही किया जाय।

आषाढ शुक्ल स्कन्द षष्ठी पूर्वाह्न व्यापिनी ग्राह्य है। स्कन्द पुराण मे कहा गया है कि कृष्ण अष्टमी, स्कन्द षष्ठी, शिवरात्रि चतुर्दशी, पूर्व तिथि युत ग्राह्य है। पारण तिथि के अन्त मे किया जाय।

भाद्रकृष्ण षष्ठी चन्द्र षष्ठी।
सा चन्द्रोदय व्यापिनी ग्राह्या।
उभयत्र तथात्वे पूर्वाह्ने ग्राह्या।। तदुक्तम्–
तत्र भाद्रपदे मासि षष्ठी पक्षे सितेतरे।
चन्द्रषष्ठी व्रत कुर्यात् पूर्ववेध प्रशस्यते।।

चन्द्रोदये यदा षष्ठी पूर्वाह्णे वा पराहनि।
चन्द्रषष्ठी सिते पक्षे सैवोपोष्या प्रयत्नत ।।
इयमेव कपिलाख्या व्रतम्,
नभस्य कृष्णपक्षे रोहिणी पातभूसुतै ।
युक्ता षष्ठी पुराणज्ञैः कपिला परिकीर्तिता ।।
गोवत्सपूजा, कपिला दानेनाश्वमेधफलप्राप्तिरिति।
तत्रोक्तम् पातोव्यतीपातोभूसुतो भौम ।
भाद्रपदशुक्लासूर्यषष्ठी। भविष्योत्तरे–
शुक्ले भाद्रपदे षष्ठ्या स्नान भास्करपूजनम्।
प्राशन पञ्चगव्यस्य अश्वमेधफलप्रदम्।।
इयमेव चम्पाख्या। स्कन्दे–
षष्ठी भाद्रपदे शुक्ला वैधृत्या च समन्विता।
विशाखा भौमयोगेन सा चम्पेतीहविश्रुता।।
गवा कोटि सहस्राणि कुरुक्षेत्रेऽर्कपर्वणि।
चम्पादानस्य राजेन्द्र कला नार्हन्ति षोडशीम्।।
इतिसूर्यदैवतव्रतमिदम्।

अभिज्ञा - भाद्र कृष्ण षष्ठी, चन्द्रषष्ठी, चन्द्रोदय व्यापिनी, दोनो दिन चन्द्रोदय व्यापिनी रहे तो पूर्व का ग्राह्य है। पूर्व दिन या पर दिन मे जब उदय काल मे षष्ठी प्राप्त हो तो उपवास विहित है। इसे कपिला षष्ठी व्रत कहते है। भाद्र कृष्ण षष्ठी–रोहिणी नक्षत्र व्यतिपात योग व मगलवार से युक्त हो तो कपिला व्रत नाम से जाना जाता है। इसमे धेनु पूजा, कपिला गाय दान करने से अश्वमेघ यज्ञ के फल की प्राप्ति होती है।

भाद्र शुक्ल षष्ठी सूर्य षष्ठी है। भविष्योत्तर का वचन है। भाद्र शुक्ल षष्ठी को स्नान करके पच गव्य प्राशन एव सूर्य का पूजन करने से अश्वमेध यज्ञ के फल की प्राप्ति होती है। स्कन्द पुराण मे यही चम्पा नाम से विख्यात है।

भाद्र शुक्ल षष्ठी, विशाखा नक्षत्र–मगलवार तथा वैधृति योग के मिलने पर चम्पा व्रत होता है। इसमे सूर्य की पूजा होती है। इस दिन व्रत व दान करने से कुरुक्षेत्र मे सूर्यग्रहण के अवसर पर प्रचुर गोदान के फल से श्रेष्ठ कहा गया है। यह आदित्य प्रधान व्रत है।

सप्तमी

अथ सप्तमी। सा पूर्वाह्न व्यापिनी ग्राह्या। युग्मवाक्यात्।

वैशाखशुक्लसप्तम्या गगा पूजा।

ब्राह्मे—

वैशाखशुक्ल सप्तम्या जह्नुना जाह्नवी स्वयम्।

क्रोधात्पीता पुनस्त्यक्ता कर्णरन्ध्रात्तु दक्षिणात्।।

ता तत्र पूजयेद् देवीं गगा गगनमेखलाम्। इति।

इय च पूर्वाह्न व्यापिनी ग्राह्या। पूर्वाह्नौ वै देवाना कालश्रवणात्।

आश्विनशुक्लपक्षे सप्तमी। देवीपूजाया पराह्नव्यापिनी ग्राह्या।

प्रात मुहूर्ताधिक्ये सैव ग्राह्या।

भविष्ये—

युगाद्या वर्षवृद्धिश्च सप्तमी पार्वतीप्रिया।

रवेरुदययुक्तासु तिथियुग्मतेति।

वर्षवृद्धि। जन्मतिथि । अस्यामेव पुस्तकम् स्थापयेत्।

रुद्रयामले—

मूलऋक्षे सुराधीश पूजनीया सरस्वती।

पूजयेत्प्रत्यहं देव यावद्वैष्णवमृक्षकम्।।

नाध्यापयेन्न च लिखेत् नाध्यापीत कदाचन।

पुस्तके स्थापिते देवविद्याकामो द्विजोत्तम्।। इति।

अभिज्ञा :- यह सप्तमी पूर्वाह्न व्यापिनी होनी चाहिए। युग्म वचन षष्ठी सप्तमी है। बैशाख शुक्ल सप्तमी को गगा पूजा होती है इसी तिथि को जह्नु ऋषि ने गगा का पान करके पुन श्री भगीरथ के प्रार्थना पर कर्णरन्ध्र से वाहर कर दिया। इस दिन गगा का पूजन करना चाहिए। यह पूर्वाह्न व्यापिनी ग्राह्य है देवताओ का समय पूर्वाह्न मे कहा गया है।

आश्विन शुक्ल सप्तमी देवी पूजन मे पराह्न व्यापिनी होनी चाहिए। सूर्योदय मे मुहूर्त मात्र सप्तमी रहे तो भी युगादि तिथि वर्ष मे अभ्युदयकारिणी है।

सूर्योदय की सप्तमी मे वर्षगाठ व जन्मतिथि मनानी चाहिए। इसी तिथि मे पुस्तक की स्थापना अर्थात् सरस्वती पूजन करे। रुद्रयामल का वचन है। मूल नक्षत्र मे सरस्वती की स्थापना किया जाय। इस समय पढना लिखना बन्द रक्खे तथा यह अनध्याय काल माना गया है।

माघशुक्ला रथसप्तमी जयन्ती अचलोच्यते।
सा चारुणोदय व्यापिनी ग्राह्या।
माघस्य शुक्लपक्षे तु सप्तमी या त्रिलोचन·।
जयन्ती नाम सा प्रोक्ता सर्वपापहरातिथिः।।
अचला सप्तमी दान कथित ते विशांपते।
सर्वपापप्रशमनम् सर्वसौभाग्यवर्धनम्।।
स्मृति चन्द्रिकायाम्–
सूर्यग्रहणतुल्या तु शुक्लामाघस्य सप्तमी।
अरुणोदयवेलाया तत्र स्नान महाफलम्।
पुराणे–
अरुणोदयवेलाया शुक्ला माघस्य सप्तमी।
गगाया यदि लभ्येत कोटिसूर्यग्रहै समम्।। इति।

अभिज्ञा :- माघ शुक्ल सप्तमी रथ सप्तमी है। यह जयन्ती सप्तमी तथा अचला सप्तमी भी कही जाती है। वह सूर्योदय व्यापिनी होनी चाहिए। स्मृति चन्द्रिका का वचन है। अचला सप्तमी को दिया गया दान सब प्रकार के पापो का नाश करके सौभाग्य वृद्धि करता है।

माघ मासे सिते पक्षे सप्तमी कोटिभास्करा।
कुर्य्यात् स्नानार्ध्य दानाभ्यामायुरारोग्यसम्पद.।।

अरुणोदय वेला मे सप्तमी को स्नान करना अतीव पुण्य कारक है।

गगायां यदि लभ्येत कोटि सूर्यफलप्रदेति।।

इसमे गगा स्नान का विशेष महत्व है।

अष्टमी

अथ अष्टमी। सा कृष्णा पूर्वाह्नव्यापिनी शुक्ला तु पराह्नव्यापिनी।
शुक्लपक्षेऽष्टमी चैव कृष्णपक्षे चतुर्दशी।
पूर्वविद्धैव कर्तव्या परा विद्धा न कुत्रचित्।।

अभिज्ञा – कृष्णा पूर्वाह्न शुक्ला पराह्न व्यापिनी ग्राह्य है। शुक्ल पक्ष की अष्टमी कृष्ण पक्ष की चतुदर्शी पूर्व विद्धा ही मान्य है।

चैत्रशुक्ला अशोकाष्टमी।
अशोककलिकाश्चाष्टौ ये पिबन्ति पुर्नवसौ।
चैत्रे शुक्लाष्टम्या न ते शोकमवाप्नुयु ।।
प्राशनमत्रश्च-त्वाम् शोकवराभीष्ट मधुमास समुद्भवम्।
पिबामि शोकसतप्तो मामशोक सदा कुरु।।
अस्यामेव कृत्यमुक्त विष्णुपुराणे–
पुनर्वसु वुधोपेता चैत्रे मासि सिताष्टमी।
प्रातस्तु विधिवत्स्नात्वा वाजपेयफल भवेत्।।
अस्यामेव वसन्तनामाष्टमी व्रतमुक्तम्। भविष्ये–
उपवास· कृष्न पूजा कृष्न नाम जपादिभि ।
पारण, सन्तानवृद्धि· फलम्।। इति।

अभिज्ञा :– चैत्र शुक्ल अष्टमी– अशोक अष्टमी– इस तिथि मे तथा पुनर्वसु नक्षत्र मे आठ अशोक कलिका पीस कर पीने से शोक नहीं होता।

मत्र मूल मे उद्धृत है। "त्वामशोक सदाकुरु"।

इसके विषय मे विष्णु पुराण मे कहा गया है कि चैत्र शुक्ल अष्टमी वुधवार को पुनर्वसु नक्षत्र युक्त मे प्रात काल स्नान दान से वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है।

इसी को वसन्त अष्टमी व्रत भी भविष्य पुराण मे कहा गया है। श्री कृष्ण की पूजा तथा उनके नाम का जप एव उपवास करने से सन्तान की वृद्धि होती है।

तत्रैवोक्तम्–

भाद्रकृष्ण जन्माष्टमी।
सा चार्धरात्रि व्यापिनी ग्राह्या।
रोहिणी वुधादियोगमनपेक्ष्यापि ग्राह्या। तद्योगस्य प्राशस्त्यत्वात्। तद्योगस्यैवापतत्वे तु कदाचित्तदभावेऽपि व्रतलोपापत्तेरतस्तद्योग सत्वे एव स्यादिति नैव युक्तम्।एतत सर्व स्फुटी भविष्यति क्रमश।

तदुक्त विष्णुधर्मोत्तरे–

रोहिण्यामर्धरात्रे च मासि भाद्रपदेऽष्टमी।
सप्तम्यामर्धरात्राध कलयापि यदा भवेत्।।
अत्र जातो जगतस्त्रष्टुस्तुतिभि हरिरीश्वर।
तमेवोपवसेत्काल तत्र कुर्याच्च पारणम्।।
तथा भाद्रपदमासे कृष्णाष्टम्या कलौ युगे।
अष्टाविशंतितमे जात कृष्णोऽसौ देवकी सुत।। व्रह्मपुराणे–
मासि भाद्रपदेऽष्टम्या निशीथे कृष्णपक्षगे।
शशाके वृषेराशिस्थे श्रृक्षे रोहिणी सज्ञके।
योगेऽस्मिन् वासुदेवाद्धि देवकी मामजीजनत्। भविष्योत्तरे –

अभिज्ञा भाद्र कृष्ण जन्माष्टमी अर्ध रात्रि व्यापिनी ग्राह्य है। रोहिणी नक्षत्र बुधवार दिन आदि योग न मिलने पर भी तिथि प्रधान मान्य है। यदि वह योग मिल जाय तो उत्तम है। यदि बुधवार रोहिणी अष्टमी का अनिवार्य होना कहा जाय तो कभी–कभी सम्पूर्ण योगो के अभाव मे व्रत ही समाप्त हो जायेगा। इसलिए यदि सभी योग मिल जाये तो उत्तम है अन्यथा नीशीथ मे अष्टमी होने पर व्रत किया जाय। यह निम्न लिखित वचनो से स्पष्ट होगा–

विष्णुधर्मोत्तर – ''रोहिण्यामर्धरात्रे च मासि भाद्रपदेऽष्टमी'' सप्तमी के दिन अर्ध रात्रि मे कला मात्र भी अष्टमी मिले, तो उपवास के लिए विहित है। इसी समय पितामह के प्रार्थना पर परमात्मा ने अवतार लिया है। उसी के अनुसार दूसरे दिन यदि दोपहर के अन्दर अष्टमी समाप्त हो जाय तो अत मे अन्यथा प्रात काल ही पारण का विधान है–

अष्टमी दुर्गनवमी च दुर्वा चैव हुताशिनी।
पूर्वविद्धैव कर्तव्या तिथ्यन्ते च पारणम्।।
यामद्वयोर्ध्वगामिन्यां प्रातरेव हि पारणम्।

अर्धरात्रे समुद्भूते तारापत्युदये सति।
नियतात्मा शुचि स्नात पूजा तत्र प्रवर्तयेत् इति।। विष्णुधर्मोत्तरे–
रोहिणी अष्टमी युक्ता निश्यर्धे दृश्यते यदि।
मुख्य काल· स विज्ञेयस्तत्र जातो हरि स्वयम्।। वशिष्ठोप्याह
पूर्वत्रैव परत्रैव वा निशीथव्याप्तिस्तदा
कर्मकाल व्याप्ततया सैव ग्राह्या।
उभयत्र तद्व्याप्तावव्याप्तौ तु परैव।
प्रात सकल्पस्य विधानात्। तत्काले तत्सत्वात्।
अतएव ब्रह्मवैवर्ते उक्तम् –
वर्जनीया प्रयत्नेन सप्तमी सहिताष्टमी।
सा ऋक्षापि न कर्तव्या सप्तमी सहिताष्टमी।। ब्रह्माण्डपुराणे–
रोहिणी नाम नक्षत्रं जयन्ती नाम सर्वरी।
मुहुर्तो विजयो नाम यत्र जातो जनार्दन ।।
पाद्मेऽपि। **प्रेत योनिगतानाम् तु प्रेतत्वं नाशितं नरै ।**

अभिज्ञा .– ब्रह्मपुराण एव **भविष्योत्तर** का वचन मूल मे है–

तथा **भाद्रपदे मासे कृष्णाष्टम्या कृष्णोऽसौ देवकी सुत ।**

मासि भाद्रपदेऽष्टम्यां निशीथे कृष्णपक्ष शशाङ्के वृषराशिस्थे ऋक्षे रोहिणी सज्ञके। योगेऽस्मिन् वासुदेवाद्धि देवकी मामजी जनत्।

विष्णुधर्मोत्तर मे कहा गया है– आधी रात मे चन्द्रमा के निकलने पर मन बुद्धि को वश मे रखते हुए स्नान करके पूजा करे। स्वय हरि ने अवतार लिया है अत वही काल उस समय व्रत के लिये मुख्य है।

पूर्व दिन या पर दिन जब भी अर्ध व्यापिनी अष्टमी मिले तब यह व्रत किया जाय। ऐसा वशिष्ठ का भी वचन है। यदि दोनो दिन निशीथ व्यापिनी अष्टमी प्राप्त हो तो पर दिन व्रत किया जाय।

सकल्प विधान के कारण तथा कार्यकाल व्यापिनी तिथि है। **ब्रह्मवैवर्त** पुराण के अनुसार नक्षत्र युक्त होने पर भी सप्तमी युक्त अष्टमी वर्जित है। ब्रह्माण्ड पुराण मे कहा गया है– यदि अष्टमी के साथ रोहिणी नक्षत्र भी निशीथ मे मिल जाय तो वह जयन्ती व्रत नाम से विशेष फलदायक है। पद्म पुराण मे कहा गया है– प्रेत योनि मे पडे हुए जीवो का भी व्रती उद्धार कर देते हैं।

यै कृता श्रावणे मासि अष्टमी रोहिणी युता।
किं पुन बुधवारेण सोमेनापि विशेषत ।।
किं पुन नवमी युक्ता कुले कोट्यास्ति मुक्तिदा।। इति।
श्रावणपद शुक्लमासाभि प्रायेणोक्तम्।
प्राजाप्रत्यर्क्ष सयुक्ता कृष्णा नभसि चाष्टमी।
जयन्ती नाम सा प्रोक्ता साह्युपोष्या महाफला।। इति।
अत्र बहव उदयव्यापिनीमाद्रियन्ते।
उदये चाष्टमी किञ्चिन्नवमी सकला यदि।
भवेत्तु बुधसयुक्ता प्राजाप्रत्यर्क्ष सयुता।।
अपि वर्ष शतेनापि लभ्यते यदि मानवै ।। इति।
स्कन्दवाक्यादिति। परे तु स्कन्दवाक्ये। उदयपदमर्द्धरात्रौ अष्टमी व्रतबोधकम्। उदयपदेन चन्द्रोदयोपादानात्।
तारापत्युदये सतीत्युक्त विष्णुधर्मोत्तरैकवाक्यात्।
(जन्माष्टमी रोहिणी च शिवरात्रिस्तथैव च।
पूर्वविद्धैव कर्तव्या तिथिभान्ते च पारणम्।।)
न चोदयशब्दस्य चन्द्रोदयपरत्वे तदानीमष्टम्या ।
कालव्यापिनी सदिग्धतया तस्मिन्नेव वाक्येन
नवमी सकला यदित्युक्तेर्वैयर्थ्यापतिरिति वाच्यम्।
सप्तम्यार्धरात्राध कलयापि यदा भवेदिति प्रागुदाहृत
वाक्यस्य सप्तमी परनवमी सकला त्वस्यापि सार्थक्यात्।
यद्यपि सप्तमी सहिताष्टम्या भुक्त्वा ऋक्ष द्विजोत्तम।
प्राजापत्य द्वितीयेऽह्नि मुहुर्तार्ध भवेद्यदि।।
तदाष्टयामिक ज्ञेयं प्रोक्तम् व्यासादिभि· पुरा।
स्कन्दवचन तदपि व्रतजपमुपवासश्रवणात्।
अष्ट्यामिक पदस्यारम्भाच्च।
''या तिथि समनुप्राप्य उदय याति भास्कर ।
सा तिथिः सकला ज्ञेया दानाध्ययनकर्मसु।।
इत्यादि दानादिविषये तिथे· उदयत्वकथन न तूपवासे।

किंच उदयव्यापिनीव्रतबोधक वचनानामन्यथोपपत्ते· अर्धरात्रिव्रत-वोधक मुनिवचन सामञ्जस्येनार्धरात्रि व्यापिन्येव श्रीकृष्णजन्माष्टमी व्रतम् कुर्यात् इति सन्देहेनार्हतीति सक्षेप·।

अभिज्ञा - जो लोग रोहिणी सहित श्रावण अष्टमी व्रत का आचरण करते है। वह श्रावण शब्द शुक्ल अष्टमी का बोधक है।

बहुत से आचार्यो का मत उदय व्यापिनी अष्टमी मे व्रत करने का है। बुधवार रोहिणी युक्त उदय व्यापिनी अष्टमी श्रेष्ठ है। कुछ लोग उदय शब्द चन्द्रोदय परक कहते है। अन्यथा विष्णुधर्मोत्तर से एक वाक्यता नही होगी।

"**तारापत्युदिते सति**" कहा गया हे। यदि यह शका करे कि उदय शब्द चन्द्रादय परक माना जाय तो **सकला नवमी** "यह वचन विरोध होगा। समाधान देते है कि प्रात सप्तमी, निशीथ मे अष्टमी पश्चात् नवमी मिल सकती है। इस प्रकार वचन की सार्थकता हो जाती है।

यद्यपि सप्तमी युक्त अष्टमी मे भोजन करके दूसरे दिन दो दण्ड भी अष्टमी रोहिणी नक्षत्र मे रहे तो रात्रि दिन का उपवास किया जाय। यह स्कन्द मे कहा है। तथापि व्रत उपवास कहा गया है। सूर्योदय तिथि स्नान दान मे पूर्ण मानी गयी है उपवास मे नही। उदय व्यापिनी वचन का अन्यथा अर्थ करना होगा। अर्थात् चन्द्रोदय व्यापिनी सगति के लिये समझना होगा। अर्धरात्रि व्रत वोधक मुनिवचन के समन्वय हेतु अर्धरात्रि व्यापिनी श्री कृष्ण जन्माष्टमी ही निश्चय रुप से माननी चाहिए।

अथ भाद्रशुक्लदूर्वाष्टमी।
सा च पूर्वाह्नव्यापिनी ग्राह्या।
शुक्लाष्टमी तिथिर्यातु मासि भाद्रपदे भवेत्।
दूर्वाष्टमी तु सा ज्ञेया नोत्तरा सा विधीयते। भविष्योक्ते।

इयं चाष्टमी यदि कन्यागत सूर्ये तथा अगस्त्योदये न वाक्रान्ता स्यात्। सिंहसक्रान्ते विशतिरंशात्पर अगस्त्योदय स्यात्।

अभिज्ञा :– दूर्वाष्टमी पूर्वाह्न व्यापिनी ग्राह्य है। यह व्रत कन्या के सूर्य तथा अगस्त्योदय के बाद नहीं किया जाता है। यदि शुक्ल अष्टमी के पूर्व यदि अगस्त्योदय हो तो भाद्र कृष्ण अष्टमी सिह के सूर्य मे विहित है।

तदा कृष्णपक्षाप्टम्यामेव कार्या। इति स्कन्दोक्ते ।

शुक्ले भाद्रपदे मासि दुर्वा सज्ञा तथाष्टमी।
सिहार्क एव कर्तव्या न कन्यार्के कदाचन।।
सिहस्थे चोत्तमा सूर्येऽनुदिते मुनिसत्तम।
अगस्त्योदस्तु सिहस्थे सूर्ये एव विशति दिनोस्योपरिष्टाद् भवति।
अत्र विशेष ।
मुहुर्ते रोहिणेऽष्टम्या पूर्णा वा यदि वा परा।
दुर्वाष्टमी तु सा कार्या ज्येष्ठामूलञ्च वर्जयेत्। पुराणसमुच्चये।

तथा च यस्मिन् वर्षे ज्येष्ठा मूलेयोगरहिता अष्टमी न प्राप्यते तदानुकुल्येन कार्या। न तु सर्वथा त्याज्या।

तदुक्त तत्रैव–
कर्तव्यात्वेक भक्तेन ज्येष्ठा मूल यदा भवेत्।
दूर्वामभ्यर्चयेद्भक्त्या न वन्ध्या दिवस नयेदिति।।

पूजनविधि –भविष्योक्ते
शुचौ दिवसे प्रजाताया दुर्वाया ब्राह्मणोत्तम।
स्थाप्य लिंग ततो गन्धै पुष्पैर्धूपै समर्चयेत्।।

अभिज्ञा – मुनि अगस्त के उदय होने के पूर्व सिह के सूर्य मे दुर्वाष्टमी श्रेष्ठ है। सिह राशि के २० अश के पश्चात् अगस्योदय होता है। ज्येष्ठा व मूल नक्षत्र दूर्वाष्टमी व्रत मे वर्जित है। यदि सर्वथा ज्येष्ठा मूल रहित न मिले तो व्रत लोप नही करना चाहिए।

व्रताचरण आवश्यक है। एक समय भोजन करके व्रत का पालन किया जाय। पूजन प्रकार – पवित्र स्थान पर दुर्वा जहा हो वहॉ शिव लिग बनाकर गन्धाक्षत पुष्प से पूजन करके अर्घ्य दिया जाय। दुर्वादल अकुर तथा शमीपत्र चढावे। धूप, दीप, नैवैद्य, फल, आरती, षोडशोपचार आदि पूजन विधि है। इसमे शकर जी की पूजा विहित है।

भोजन-अनग्नि पक्वमश्नीयादन्नं दधि फलं तथा।
अक्षार लवण ब्रह्मन् अश्नीयान्मधुनान्वितम्।

अग्नि पक्व भोजन निषिद्ध है।

दध्यक्षतैर्द्विजश्रेष्ठ अर्घ दद्यात् त्रिलोचने।
दुर्वाशमीभ्याम् विधिवत् पूजयेच्छ्द्धयान्वित ।।
मन्त्रश्च–त्व दुर्वेऽमृत जन्मासि वन्दितासि सुरासुरै ।
सोभाग्य सतति देहि सर्वकार्यकरी भव।।
यथा शाखा प्रशाखाभिर्विस्तरासि महीतले।
तथा ममापि सन्तान देहित्वमजरामरम्।। इति।
इद च व्रत स्त्रीणा नित्य। पुराणसमुच्चये–
या न पूजयते दुर्वा मोहादिह यथाविधि।
त्रीणि जन्मानि वैधव्यं लभते नात्र संशय ।।
अस्यापवाद । ज्येष्ठ पूजन। लैङ्गे–
कन्यार्के याष्टमी शुक्ला ज्येष्ठर्क्षे महती स्मृता।
लक्ष्मीसूक्त मन्त्रेण ज्येष्ठा तत्र पूजयेत्।।
इय च ज्येष्ठा योगे पूर्वान्या तु परा। पुराण समुच्चये–
यस्मिन्दिने भवेज्ज्येष्ठा मध्याह्नादूर्ध्वमप्यणु ।
तस्मिन्हविष्य पूजा च न्यूना चेत्पूर्ववासरे। स्कन्दोक्ते –
''मैत्रेणावाहयेद्देवीं ज्येष्ठायै ते नमो नम ।
सर्वाण्यै ते नमस्तुम्य सधूपैस्ते नमो नम·।।
(एह्येहि त्वं महाभागे सुरासुर नमस्कृते।
ज्येष्ठे त्व सर्व देवाना मत्समीपगताग्भव।
इत्यावाह्य 'तामग्निवर्णाम्' इति सम्पूजयेत।)

अभिज्ञा · मत्र मूल मे उद्धृत है। (त्व दूर्वे अमर इति।

स्त्रियो के लिए यह व्रत कामद है। जो स्त्रिया प्रमाद वश दूर्वा का पूजा नहीं करती उन्हे तीन जन्म तक वैधव्य प्राप्त होता है। शिवलिग पर ज्येष्ठा मे पूजन का विधान है।

कन्या के सूर्य मे ज्येष्ठा नक्षत्र के दिन लक्ष्मी प्राप्ति हेतु ज्येष्ठा नक्षत्र का पूजन करे। ज्येष्ठा नक्षत्र के योग होने पर पूर्व दिन अन्यथा पर दिन मे पूजन का विधान है। अनुराधा नक्षत्र मे योग होने पर आवाहन किया जाय। आवाहन पूजन नाम मत्र से किया जाय।

अस्यामेव महालक्ष्मी व्रतारम्भ ।
तच्चाश्विनकृष्णाष्टमी पर्यन्त भवति।
आश्विनकृष्णचन्द्रोदययोगिनी ग्राह्या।
पूर्वा परा वा विद्धा वा ग्राह्या चन्द्रोदये सदा।
त्रिमुहूर्तापि सा पूज्या परत उर्ध्वगामिनी ज्येष्ठाया तु प्रपूजयेत्।
मूले विसर्जयेद्देवीं त्रिदिन व्रतमाचरेत्।

मन्त्रस्तु– मूलपक्तेस्त्रुटिश्चोर्ध्वगामिनीति, चन्द्रोदयादूर्ध्वगामिनी त्रिमुहुर्तव्यापिनी अष्टमी चेत्तदा ग्राह्या ना चेत्पूर्वेवेत्यर्थ चन्द्रप्रकाशे। **अर्धरात्रिमतिक्रम्य वर्तते योत्तरा तिथि तदा तस्या तिथौ कार्य महालक्ष्मीव्रत सदेति।**

अभिज्ञा महालक्ष्मी का व्रत भी इसी दिन प्रारम्भ होता है तथा अश्विन कृष्ण अष्टमी तक किया जाता है। लक्ष्मी व्रत चन्द्रोदय व्यापिनी अष्टमी मे किया जाता है। जीवत्पुत्रिका व्रत सूर्योदय व्यापिनी मे होना चाहिए। किसी अन्य मत से चन्द्रोदय व्यापिनी होनी चाहिए। यह पूर्व दिन या पर दिन जब भी हो। ज्येष्ठा नक्षत्र मे पूजन मूल नक्षत्र मे विर्सजन होता है। उर्ध्वगामिनि शब्द की व्याख्या है– चन्द्रमा के उदय होने पर। अनेक वचनो का समन्वय इसी मे है।

आश्विनशुक्लाष्टमी परा।
अत्र सप्तमीमुहुर्तन्यूनापि चेत्तदानीं परैव।
तदुक्त देवीपुराणे–
सप्तमी शेष सयुक्ता वर्जनीया सदाष्टमी।
स्तोऽकापि सा तिथिः पुण्या यस्या सूर्योदयो भवेत्।। इति।
तथा स्मृतिसग्रहेऽपि–
शरन्महाष्टमी पूज्या नवमी संयुक्ता सदा।
नवमी चाष्टमी युक्ता लाभे तु सप्तमी युतापि ग्राह्या। तदुक्त–
सप्तम्यापि युता कार्या मूलेन तु विशेषत । इति।

(भद्रकाली पूजार्धरात्रि व्यापिन्यामष्टम्यामेव दुर्गाष्टमी तु सप्तमी वेधरहिता कार्या इति निष्कर्षा ।)

अभिज्ञा—अश्विन शुक्ल अप्टमी आश्विन शुक्ल अष्टमी परा ग्राह्य ह। सप्तमी तिथि युक्त अप्टमी अग्राह्य है। सूर्योदय में अष्टमी होन पर नवमी युक्त यह व्रत विहित ह। शुद्ध अष्टमी न मिलने पर मूल नक्षत्र मे सप्तमी के याग होन पर भी पूजन करना चाहिए।

माघशुक्लभीष्माष्टमी तत्र कृत्यमुक्तम्।
पाद्मेऽपि—
माघे मासि सिताष्ट्म्या सलिल भीष्मतर्पणम्।
श्राद्ध च ये नरा कुर्युस्ते स्यु सन्ततिभागिनः।।
व्राह्मणाधश्च ये वर्णा दद्युर्भीष्माय नो जलम्।
सवत्सरकृत तेषां पुण्य नश्यति सत्तम।।
तर्पणमन्त्रस्तु महाभारते—
भीष्म शान्तनवो वीरस्सत्यवादी जितेन्द्रिय ।
आभिरद्भिरवाप्नोति पुत्रपौत्रोचितक्रियाम्।।
"वैयाघ्रपदगोत्राय साकृत्यप्रवराय च।
अपुत्राय ददाम्येतज्जलं भीष्माय वर्मणे।।
वसुनामावताराय शान्तनोरात्मजाय च।
अर्घ ददामि भीष्माय आबालब्रह्मचारिणे।।"
इदं जीवत्पितृकोऽपि कुर्यात्।
जिवत्पितापि कुर्वीत तर्पण यमभीष्मयो ।।

अभिज्ञा माघ शुक्ल भीष्माष्टमी— इस तिथि को जल से भीष्म पितामह को तर्पण करने का विधान है जो ब्राह्मण भिन्न द्विज जल से इस तिथि को भीष्म पितामह का तर्पण करते है उन्हे अक्षय पुण्य की प्राप्ति होती है। मत्र मूल मे है। **वैयाघ्रपद व्रह्मचारिणे** यह तर्पण जिसके पिता जीवित है वह भी कर सकते है। मूल ग्रथ मे ब्राह्मण को भीष्म के लिये तर्पण करने को नही कहा गया है।

नवमी

अथ नवमी। सा पूर्वाह्नव्यापिनी ग्राह्या, युग्मवाक्यात्।
चैत्ररामनवमी- इय मध्याह्नव्यापिनी ग्राह्या।
दिनद्वये तत् व्याप्तावव्याप्तौ वा पुनर्वसु युता।
तादृश्यपि दिनद्वये स्यात्तदा परा ग्राह्या।
तदाह–
चैत्रशुक्ले तु नवमी पुनर्वसु युता यदि।
सैव मध्याह्न योगेन महापुण्यतमा भवेत्।।
तथा च–
चैत्रे मासे नवम्या तु जातो राम स्वय हरि ।
पुनर्वसु ऋक्षसयुक्ता सा तिथि सर्वकामदा।।
केवला तु सदोपोष्या नवमी शब्दसग्रहात्।
नवमी चाष्टमी विद्धा त्याज्या विष्णुपरायणै ।। इति।
अत्र ऋक्षयोगस्यैव प्राधान्यमिति वैष्णवसम्प्रदाय ।
इद व्रत नित्यमुक्तम्।
अगस्तसहितायाम्–
यस्तु रामनवम्या तु भुङ्क्ते मोहाद्विमूढधी ।
कुम्भीपाकेषु घोरेषु पच्यते नात्र सशय ।।

अभिज्ञा नवमी पूर्वाह्न व्यापिनी युग्म वचन से विहित है। चैत्र शुक्ल नवमी रामनवमी व्रत मध्याह्न व्यापिनी होती है यह दोनो दिन समान रहने पर पुनर्वसु नक्षत्र युक्त करे। दोनो दिन समान रहे तो दूसरे दिन करना चाहिए। प्रमाण मूल मे उद्धृत है।

वैष्णव जन अष्टमी विद्ध नवमी नही मानते हैं। इसमे नक्षत्र की प्रधानता है। यह व्रत सबको करना चाहिए। राम नवमी को भोजन करने वाला कुम्भी पाक नरक मे गिरता है। यह अगस्त सहिता का वचन है।

आश्विनकृष्णमातृनवमी।
तत्र परिशिष्टे मातु श्राद्धे पृथक् कुर्यात् पितर्य्यपि जीविते
अथवा सावित्रि भोजनमुक्तम्।
मातु. श्राद्धे तु सम्प्राप्ते ब्राह्मणैः सह भोजनम्।
सुवासिन्यै प्रदातव्यमिति शातातपोऽब्रवीदिति।। मार्कन्डेये।

अभिज्ञा – आश्विन कृष्ण मातृ नवमी को माता का श्राद्ध पृथक् करना चाहिए। पिता के जीवित रहने पर भी माता का श्राद्ध पृथक् किया जाय। अथवा सुवासिनी स्त्री का भोजन करा दिया जाय। मार्कण्डय पुराण का वचन है कि माता के श्राद्ध के दिन पर व्राह्मण भोजन कराना चाहिए। सौभाग्यवती स्त्री को भोजन देना चाहिए।

आश्विनशुक्ल महानवमी।
सा सायाह्नव्यापिनी ग्राह्या। युग्मवाक्यात्।
श्रावणी दुर्गनवमी दुर्वा चैव हुताशिनी।
पूर्वविद्धा प्रकर्तव्या शिवरात्रिर्वले दिनम्।। इति। वृहद्यमोक्तश्च।
लिग पुराणे–
दुर्गापूजा नवमी मूलाद्यर्क्ष त्रयान्विता।
महती कीर्तिता तस्यां दुर्गा महिषमर्दिनी।।
पूजयेदिति क्रियाशेषो बोध्य ।।
राजमार्तण्डे–
नवम्यां च जप होम समाप्य विधिवद्वलिम् ।।
ब्रह्मवैवर्ते–
अत्रापराह्निके काले वलिदानं प्रशस्यते।
दशमी वर्जयेत्तत्र नात्र कार्या विचारणेति।।
तेन नवम्यामारभ्य नवम्यामेव समापयेत्।
दशम्या मिश्रिता यत्र नवमी पारणे भवेत्।।
सप्त जन्म कृतं पुण्यं तत्क्षणादेव नश्यति।
नवम्यां पारिता देवी कुलवृद्धिं प्रयच्छति।।

अभिज्ञा – युग्म वचन से यह सायकाल व्यापिनी होनी चाहिए, लिग पुराण के अनुसार– दुर्गापूजा मे नवमी मूल, पूर्वाषाढ, उत्तराषाढ तीनो नक्षत्र श्रेष्ठ है। **"मूलेनावाह्येद् देवीं,"** इस वचन से पूजन करना चाहिए। **ब्रह्मवैवर्त** के अनुसार – नवमी मे जप होम वलिकर्म विहित है। अपराह्न मे पूजा विधान है। दशमी मे वर्जित है। नवरात्र नवमी मे ही समाप्त करना चाहिए। दशमी मे पारण करने से पुण्य की हानि होती है। नवमी मे पारण करने से कुल वृद्धि होती है।

दशमी

अथ दशमी।

सा च पूर्वा युता कृष्णा, शुक्ला तु पराह्नगा।

शुक्लपक्षे तिथिर्ग्राह्या यस्यामभ्युदते रवि ।।

कृष्णपक्षे तिथिर्ग्राह्या यस्यामस्तमितो रवि ।

इति युग्मवत्सामान्यवाक्यात्। उपवासादौ कर्मणि पूर्वैव।

स्कन्दोक्ते –

दशमी चैव कर्तव्या सदुर्गा द्विजसत्तम।

शिवरहस्येऽपि–

दशम्येकादशी विद्धा नोपास्या हि कथञ्चन।

देवीपुराणे धर्मराजयमम्। **ज्येष्ठ शुक्ल दशमी।**

वराहे–

दशमी शुक्लपक्षे तु ज्येष्ठे मासि बुधाहनि।

अवतीर्य यत स्वर्गात् हस्तर्क्षे सरिद्वरा।

हरेत् दशपापानि तस्माद्दशहरा स्मृता।

स्कन्देऽपि–

तस्या स्नान प्रकुर्वीत दान चैव विशेषत ।

या काचित् सरित प्राप्य दद्यादर्घतिलोदकम्।।

मुच्यते दशभि पापैस्समहापातकीत्यपि।

ज्येष्ठमासे सिते पक्षे दशम्या बुधहस्तयो ।।

गरानन्दे व्यतीपाते कन्या चन्द्रे वृषे रवौ।

दशयोगे नर· स्नात्वा सर्वपापै प्रमुच्यते।।

इयञ्च यत्र योगबाहुल्य सैव ग्राह्या। योगाधिक्ये फलाधिक्यात्।

अस्य मलमासत्वे तु मलमासे एवेयम्।

यदाह ऋष्यश्रृग –

दशहरासु नोत्कर्ष चतुर्ष्वपि युगादिषु।

उपाकर्म महाषठ्या ह्येतदुक्त वृषादिति।।

अभिज्ञा - कृष्णा दशमी पूर्वा, शुक्ला दशमी पराह्न व्यापिनी गाह्य है। शुक्ल पक्ष मे सूर्योदय व्यापिनी, कृष्ण पक्ष मे सूर्यास्त व्यापिनी दशमी

होनी चाहिए। व्रत न पूदा नन्द्य है। स्कन्द पुराण म नवमी सहित दशमी कहा गया ह। **शिव रहस्य** म एकादशी विद्ध दशमी का निषध ह। ज्येष्ठ शुक्ल दशमी **वाराह पुराण** क अनुसार दशहरा इस याग के कारण दश प्रकार का पाप नष्ट करना ह। दस योग– (१) ज्यष्ठ मास (२) शुक्ल पक्ष, (३) दशमी तिथि, (४) बुध दिन, (५) हस्त नक्षत्र, (६) गरकरण (७) आनन्द (८) व्यतीपात योग, (६) कन्या, का चन्द्रमा, (१०) वृष का सूर्य। यह सम्पूर्ण योग एक साथ न मिलने पर भी जितना अधिक याग हो उतना ही श्रेष्ठ है। मलमास मे भी यदि वह योग हा तो मलमास मे भी ग्राह्य है। ऋष्यश्रृग के अनुसार युगादि चारो तिथियो मे तथा दशहरा मे उत्कर्ष नही होता।

दशपापानि राजमार्तण्डे–

अदत्तानामुपादान हिसा चैवा विधानत ।

परदारोपसेवा च कायिक त्रिविध स्मृतम्।।

पारुष्यमनृत चैव पाशुन्य चापि सर्वश ।

असम्वद्ध प्रलापश्च वाङ्मय स्याच्चतुर्विधम्।।

परद्रव्येष्वभिधानं मनसानिष्टचिन्तनम्।

वितथाभिनिवेशश्च मानस त्रिविध स्मृतम्।। इति।

अभिज्ञा - वृष सक्रान्ति मे उपाकर्म तथा महापष्ठी माना जाता है। राज मार्तण्ड के अनुसार दस पाप निम्न है– शारीरिक पाप तीन प्रकार– (१) विना दिये ले लेना, (२) हिसा (३) पर स्त्री के साथ दुर्विचार। वाणी के पाप चार प्रकार– (१) कठोर भाषण (२) असत्य भाषण, (३) चुगली करना, (४) असगत भाषण। मानस पाप के तीन प्रकार– (१) दूसरे के धन का लालच (२) दूसरे का अनिष्ट चिन्तन (२) निरर्थक आसक्ति।

दशहरा के दिन गगा स्नान करने से उक्त पाप नष्ट हो जाते है।

अथ आश्विनशुक्ल विजया दशमी।

सा च दशमी पूजा यात्रादौ नक्षत्रोदययोगिनी ग्राह्या।

चमत्कारचिन्तामणौ–

'आश्विनस्य सिते पक्षे दशम्या तारकोदये।

सकलो विजयो ज्ञेयस्सर्वकार्यार्थसिद्धये।।
उभयदिने तद्व्याप्तौ तु पूर्वैव।
स्कान्दे–
या पूर्णा नवमी युक्ता तस्या पूज्या पराजिता।
''एकादश्या न कुर्वीत पूजन चापराजितम्।।
''दशमी यस्समुल्लंघ्य प्रस्थान कुरुते नर ।
तस्य सवत्सर राज्ये न कोऽपि विजयो भवेत्।।
दिनद्वये तारकोदय कालाभावे परदिने,
एकादशे मुहूर्ते यात्रादिक कार्यम्।
तदाह भृगु –
''आश्विनस्य सिते पक्षे दशम्या सर्वराशिषु।
सायकाले शुभा यात्रा दिवा वा विजयोदये।।
एकादशमुहूर्तोऽपि विजय परिकीर्तित ।
परदिने एकादशमुहूर्तव्याप्त्यभावेऽपि।
श्रवणयोगश्चैत्तदैव यात्रादिक कार्यम्।

अभिज्ञा – अश्विन शुक्ल दशमी विजय दशमी है। यात्रा एव पूजा आदि मे नक्षत्रोदय व्यापिनी दशमी ग्राह्य है। चमत्कार चिन्तामणि के अनुसार आश्विन शुक्ल दशमी तारा उदय के समय अर्थात् सायकाल रहने पर कार्यसिद्ध कारक है। यदि दोनो दिन सायकाल व्यापिनी रहे तो पूर्व दिन ही मान्य है।

नवमी युक्त दशमी मे अपराजिता का पूजन विहित है। एकादशी मे अपराजिता का पूजन नही करना चाहिए। दशमी बिताकर यात्रा करने से विजय नहीं होता। दशमी दोनो दिन सायकाल व्यापिनी न मिलने पर ११ वे मुहुर्त अर्थात् २२ दण्ड के समय मे यात्रा विधान कहा गया है यह भृगु का वचन है। यदि दूसरे दिन ११ वे मुहुर्त मे दशमी न रहे तो श्रवण नक्षत्र के योग मे यात्रा करनी चाहिए।

भविष्ये–
श्रवणर्क्षे तु पूर्णाया काकुत्स्थ· प्रस्थितो यत.।
उल्लङ्घयेयु सीमान तद्दिनक्षत्रे ततो नृपा ।

अत्र कृत्य, तत्रैवोक्तम्।
दशमीं सलक्षणोपेतामीशेनाभि प्रतिष्ठिताम्।
सम्प्रार्थ्य ता च पूजयित्वा तदानीं सुमुखो भवेत्।।
"शमी शमयते पाप शमी लोहितकण्टका।
धारयन्त्यर्जुनास्त्राणि रामसवाददायिनी।"
करिष्यमाणयात्राया यथाकाल सुख मम।।
तत्र निर्विघ्न कर्तृत्व भव श्रीरामपूजिते।
गृहीत्वा साक्षातामार्दा शमी मूल गतामृदम्।
गीतवादित्रनिर्घोषैरानयेत्स्वगृह्म प्रति।
ततो भूषण वस्त्रादि धारयेत्स्वजैनस्सहेत्यादि।

अभिज्ञा - काकुत्स्थ श्रीराम श्रवण नक्षत्र मे विजय यात्रा किये थे। अत राजा उसी दिन अपनी यात्रा करके अपने सीमा के आगे तक जाय। श्रीराम के द्वारा शमी सम्पूर्ण लक्षण युक्त पूजित हुई। अत प्रार्थना पूर्वक उसके समक्ष जाकर श्रद्धा पूर्वक पूजा करे।

लाल कण्टक युक्त शमी पाप का शमन करने वाली अर्जुन के अस्त्रो को उसे धारण करने वाली राम को समाचार देने मे सहायक हुई।

शमी पूजन विधि – हाथ मे अक्षत लेकर शमी के मूल के समीप आद्र – गीली मिट्टी, गीतवाद्य के साथ अपने घर लेकर आवे तथा नूतन वस्त्र कुटुम्ब सहित धारण करे। विजय यात्रा करने के उद्देश्य से शमी के नीचे जाकर प्रार्थना करे। **मत्र मूल में शमी शमयते दायिनी** है– प्रार्थना– हे शमी तुम राम के द्वारा पूजित हो। मेरे इस विजय यात्रा को निर्विघ्न सुखमय कर दो। यह भविष्य पुराण का वचन है।

एकादशी

अथैकादशी। सा च परोपोष्या। युग्मवाक्यात्।

पाद्म—

नवम्येकादशी चैव दशविद्धा यदा भवेत् ।
तदा वर्ज्या विशेषेण गगाम्भ सुरया यथा।। इति।

नारद —

नोपोष्या दशमी विद्धा सदैवैकादशी तिथि·।
तामुपोष्य नरो हन्यात् पुण्य वर्षशतोद्भवम्।।
तथा एकादशी दशविद्धा गान्धार्या समुपोषिता।
तस्या पुत्रा शत नष्ट तस्मात्तां परिवर्जयेत्।।

दशमी वैधश्च। सूर्योदयादर्वाङ्मुहूर्तद्वयशेषाया रात्रौ दशमी वेधत्व। तत्रेति वैष्णवसम्प्रदायः।

भविष्योत्तरे—

अरुणोदयकाले तु दशमी यदि दृश्यते।
सा विद्धैकादशी तत्र पापमूलमुपोषणमिति।।
आदित्योदयवेलाया प्राक्मुर्हूतद्वयान्विता।
एकादशी तु सम्पूर्णा विद्धान्या परिकीर्तिता।।
दशमी शेषसयुक्तो यदि स्यादरुणोदय ।
वैष्णवैर्न तु कर्तव्य तद्धि नैकादशी व्रतम्।।
परमापदमापन्ने हर्षे वासमुपस्थिते।
नैकादशी त्यजेत् वापि यस्य दीक्षास्ति वैष्णवी।।
अरुणशब्दो मुहुर्तद्वयवाची चतस्त्रो घटिका ।
प्रातररुणोदय निश्चय इति ब्रह्मवैवर्तोक्तेः।

स्मार्तस्तु—

सूर्योदये दशमी सत्वे वेध इति मन्यते।
सूर्योदयस्पृशा ह्येषा दशम्या गर्हिता।

सूर्योदयषष्टि घटिकात्मक । ततः लवमात्रेऽपि निन्दिता एकादशी, सूर्योदयस्पर्शिन्या दशम्या युक्ता निन्दिता एकादशीति तदर्थ इति।

अभिज्ञा – यह परा ग्राह्य है। गगा जल मे मिली मदिरा के समान दशमी विद्धा एकादशी त्याज्य है **नारद पुराण के अनुसार** दशमी विद्धा एकादशी नही करनी चाहिए अन्यथा सौ वर्ष का किया हुआ पुण्य नष्ट हो जाता है।

गान्धारी ने दशमी विद्धा एकादशी व्रत का आचरण किया था। उस के सौ पुत्र मारे गये। अत उसका परित्याग करना चाहिए।

वेध प्रकार– यदि सूर्योदय से तीन मुहूर्त पूर्व दशमी रहे तो उससे एकादशी का वेध हो जाता है। भविष्योत्तर के अनुसार दो मुहूर्त पूर्व अर्थात् छप्पन दण्ड या उससे अधिक दशमी हो तो अरुणोदय वेला मे दशमी विद्ध व्रत त्याज्य है। वैष्णव सम्प्रदाय के लोग अरुणोदय वेला मे अश मात्र भी दशमी रहने पर एकादशी व्रत न करे। शोक, हर्ष, आपत्ति आने पर भी एकादशी व्रत का त्याग नही करना चाहिए। अरुणोदय चार दण्ड पूर्व को कहते है।

स्मार्त मत मे सूर्योदय काल मे दशमी रहने पर वेध मानते है। अर्थात् ६० दण्ड के बाद भी दशमी रहे तो व्रत त्याज्य है।

यत्तु उभय दिने एकादशी सत्वे परा, स्मार्त ।
यदा तु क्षयं गतैकादशी तदा सैवोपोष्या, प्रातस्सर्व विधानात्।
प्रधानकाले तिथ्यभावेऽपि गौणकाले परिग्रहस्य युक्तत्वात्।
सर्वापि तिथि क्षयं गता, सैव गृह्यत इति। तन्न युक्तम्।
विशेषवचनोक्त युक्ते वाधनात्।
यदाह व्यास –
एकादशी यदा लुप्ता परतो द्वादशी भवेत्।
उपोष्या द्वादशी तत्र यदीच्छेत् परमा गतिम्।।
एकादशी वृद्धौ द्वितीयदिने व्रतम्।
नारद –
सम्पूर्णैकादशी यत्र द्वादशी क्षयगामिनी।
द्वादश्यां तु व्रतं कार्य त्रयोदश्यान्तु पारणम्।। तथा।
एकादशी भवेत्पूर्णा परतो द्वादशी भवेत्।
एकादशीं परित्यज्य द्वादशी समुपोषयेत्।।

भृगु –

सम्पूर्णैकादशी यत्र प्रभाते पुनरेव सा।

सर्वैरेवोत्तरा कार्या परतो द्वादशी यदि।। इति।

विष्णुरहस्ये–

एकादशी कला प्राप्ता येन द्वादश्युपोषिता।

पुण्यं क्रतुफल तस्य त्रयोदश्या तु पारणम्।।

स्मार्तास्तु–

दिनद्वये एकादशी सत्वे परदिने द्वादश्यभावे-

तु पूर्वा गृहिभिरुत्तरा यतिभि· कार्या ।

द्वादशी मात्राधिक्ये तु एकादश्यामेवोपवास ।

एकादशी वृद्धौ तु सर्वैरपि परैवोपोष्या।।

वृद्धयैकादश्याधिक्ये तु पूर्वा गृहिभिरुत्तरा यतिभि इति प्राहु ।

अभिज्ञा यदि दोनो दिन एकादशी हो तो दूसरे दिन मानना चाहिए। यदि एकादशी का क्षय हो तो प्रात काल विधान के कारण वह व्रत मे ग्राह्य है। सम्पूर्ण तिथि के क्षय हो जाने पर वही मानना चाहिए। इसका विरोध करते है कि आगे के वचन से विरोध होने के कारण वह नही मान्य है। **व्यास का वचन** है यदि एकादशी व्रत लुप्त है – दूसरे दिन द्वादशी हो तो शुभ गति चाहने वालो को द्वादशी मे व्रत करना चाहिए। **नारद पुराण** के अनुसार एकादशी पूर्ण हो और दूसरे दिन प्रात काल भी एकादशी रहने पर एकादशी युक्त द्वादशी व्रत करे। त्रयोदशी मे पारण किया जाय। भृगु ने स्पष्ट किया कि एकादशी ६० दण्ड है। दूसरे दिन द्वादशी हो तो द्वादशी व्रत करे त्रयोदशी मे पारण करे। **विष्णु रहस्य** का वचन है– यदि द्वादशी मे पारण मिल जाये तो लव मात्र एकादशी मिश्रित द्वादशी व्रत किया जाय। अन्य मत मे– एकादशी युक्त द्वादशी होने पर व्रत किया जाय त्रयोदशी मे पारण किया जाय। स्मार्त लोग तो, यदि एकादशी दोनो दिन हो और द्वादशी मे पारण नही है तो गृहस्थ पूर्व दिन तथा विरक्त दूसरे दिन व्रत करे। यदि द्वादशी दूसरे दिन कला मात्र भी अधिक हो तो द्वादशी विद्धा एकादशी व्रत करना चाहिए। दोनो दिन एकादशी सूर्योदय मे रहे तो स्मार्त–वैष्णव सभी को दूसरे दिन ही व्रत करना चाहिए।

इद व्रत नित्य।। यदाह नारद –
पक्षे-पक्षे च कर्तव्य एकादश्यामुपोषणम्।
सभार्यश्च सपुत्रश्च सजनो भक्ति सयुत ।।
सनत्कुमार –
न करोति यदा मूढ एकादश्यामुपोषणम्।
स नरो नरक याति रौरव तमसा व्रतम्।।
स्कान्देऽपि–
मातृहा पितृहा वापि भ्रातृहा गुरुहा तथा।
एकादश्या तु यो भुडक्ते पक्षयोरुभयोरपि।।
नारदीये–
यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्या शतानि च।
अन्नामाश्रित्य तिष्ठन्ति सम्प्राप्ते हरिवासरे।।
अत्राकरणे प्रायश्चित्तमपि लभ्यते।
अर्के पर्वद्वये रात्रौ चतुर्दश्यष्टमी दिवा।
एकादश्यामहोरात्र भुक्त्वा चान्द्रायण चरेत्।।
यदपि "शयिनी बोधिनी मध्ये या कृष्णैकादशी भवेत्।
सैवोपोष्या गृहस्थेन नान्या कृष्णा कदाचन।। इत्यादि वचनम्।
तत्सर्व फलाहारात्मक बोधकम् अकरणे प्रत्यवायात्।
अधिकारिणस्तु कात्यायने–
अष्टवर्षाधिके मर्त्यो ह्यशीति न्यूनवत्सर.।
एकादशीमुपवसेत् पक्षयोरुभयोरपि।।
असामर्थ्ये स्कान्दे –
कारयेद्धर्मपत्नीम् वा पुत्र वा विनयान्वितम्।
भ्रातरं भगिनीं शिष्यं ब्राह्मण दक्षिणादिभि ।।

अभिज्ञा . नारद जी के अनुसार स्त्री पुत्र सहित सबको दोनो पक्ष की एकादशी का व्रत करना चाहिए। सनत्कुमार तथा स्कन्द के अनुसार एकादशी को भोजन करने वाला नरकगामी होता है। व्रत का आचरण न करने से प्रायश्चित के लिए चन्द्रायण व्रत करने का विधान है।

कुछ लोगों का कथन है कि गृहस्थ के लिए कृष्ण पक्ष की एकादशी

का निषेध है। कुछ लोगों के मत मे गृहस्थ आषाढ शुक्ल एकादशी तथा कार्तिक शुक्ल एकादशी के मध्य कृष्ण पक्ष की एकादशी का व्रत करे अन्य न करे। समाधान देते है कि एकादशी के दिन अन्न खाना ही पाप है। इसलिए फलाहार पूर्वक व्रत अवश्य किया जाय।

आठ वर्ष से कम अस्सी वर्ष से अधिक के लोग एकादशी यदि न करे तो कोई प्रत्यवाय नही है। एकादशी व्रत स्वय करने मे असमर्थ होने पर स्त्री, भाई, बहिन, शिष्य, व्राह्मण किसी के द्वारा व्रत कराया जा सकता है।

अथ चैत्रशुक्ला एकादशी।

व्राह्मे–

चैत्रमासस्य शुक्लयामेकादश्या च वैष्णवै ।
आन्दोलिनी देवेश सलक्ष्मीकोमहोत्सवै ।।
दमनेनार्चयित्वा तु रात्रौ जागरण चरेत्। इति।

ज्येष्ठशुक्लैकादशी निर्जला।

पाद्मे–

वृषस्थे, मिथुनस्थे वा शुक्ला ह्येकादशी भवेत्।
ज्येष्ठमासे प्रयत्नेन उपोष्या जलवर्जिता।।
अत्र सशर्कर जल कुम्भदानम्। तापत्रय निवृत्तिविष्णुलोकप्राप्ति । फलमिति, तत्रैवोक्तम्।

आषाढशुक्लैकादशी शयिनी।

अत्र विष्णु प्रतिमा पूजादिकम्। अत्रैव चातुर्मासव्रतसकल्प ।

अभिज्ञा :– चैत्र शुक्ल एकादशी को दमनोत्सव पर्व मनाया जाता है। रात्रि मे लक्ष्मी सहित विष्णु की पूजा होती है यह व्राह्म का वचन है। रात्रि जागरण विहित है। ज्येष्ठ शुक्ल एकादशी निर्जल व्रत है। **पद्म पुराण के अनुसार** वृष सक्रान्ति या मिथुन सक्रान्ति हो, ज्येष्ठ शुक्ल एकादशी को जल का भी त्याग करके व्रत करना चाहिए। जल सहित कुम्भ व शक्कर दान किया जाय। आषाढ शुक्ल एकादशी हरि शयिनी एकादशी है। विष्णु प्रतिमा पूजन, चातुर्मास, व्रत, सकल्प इसी दिन किया जाता है।

भाद्रशुक्लैकादशी पार्श्वपरिवर्तिनी।

भविष्योक्ते –

प्राप्ते भाद्रपदे मासि एकादश्या सितेऽहनि।

करिदान भवेद्विष्णोर्महापूजा प्रवर्तयेत्।। इति।

कार्तिकशुक्लैकादशी बोधिनी।

ब्राह्मे–

कार्तिके मासि शुक्लायामेकादश्या जनार्दनम्।

प्रसुप्त बोधयेद् रात्रौ श्रद्धा भक्तिसमन्वित ।।

मंत्रश्च। इद विष्णुरिति वैदिका । पौराणिका –

''ॐ ब्रह्मेन्द्ररुद्रादिकुवेरसूर्य सामादिभिर्वन्दित वन्दनीय।

वुध्यस्व देवेश जगन्निवास मत्रप्रभावेण सुखेन देव।।

उत्तिष्ठोतिष्ठ गोविन्द त्यज निद्रा जगत्पते।

त्वयि सुप्ते जगत्सुप्तमुत्थिते चोत्थित जगत्।।''

तत पुष्पाञ्जलिञ्दद्यात्।

मेघा गता वियच्चैव निर्मला निर्मला दिशा।

शारदानि च पुष्पाणि गृहाण मम केशव।।

अभिज्ञा·– भविष्य पुराण के अनुसार भाद्र शुक्ल एकादशी विष्णु पार्श्व परिवर्तन तिथि है। इसमे विष्णु–पूजा का विधान है।

कार्तिक शुक्ल एकादशी विष्णु प्रवोधिनी है। रात्रि को पूजन करके जागरण व उत्सव मनाना चाहिए। मत्र मूल मे उद्धृत है।

द्वादशी

अथ द्वादशी।

सा च पूर्वा युग्मवाक्यात्। चैत्रशुक्लद्वादश्या दमनोत्सव·।
द्वादश्या चैत्रमासस्य शुक्लाया दमनोत्सव·।
बौधायनादिभि· प्रोक्त कर्तव्य प्रति वत्सरम्।।

इति रामार्चनचन्द्रिकोक्ते ।

उर्जे व्रत मधौ दोला श्रावणे विष्णु पूजनम्।
चैत्रे च दमनारोपमकुर्वाणो पततयध ।। पाद्मे।
आषाढशुक्लद्वादश्यामनुराधारहिताया पारण कुर्यात्।
हेमाद्रौ भविष्ये–
आभा, कासित पक्षेषु मैत्रश्रवणरेवती।
संगमे नहि भोक्तव्यम् द्वादश द्वादशी हरेत्।। इति।

अभिज्ञा – पूर्वा ग्राह्य है। चैत्र शुक्ल द्वादशी को दमनोत्सव किया जाता है। विविध पुष्पो से कन्दर्प का पूजन होता है। पद्म पुराण के अनुसार चैत्र मे दमनोत्सव न करने से पतन होता है।

अषाढ शुक्ल द्वादशी मे पारण के समय अनुराधा नक्षत्र नही होना चाहिए। अषाढ, भाद्रपद, कार्तिक मास मे क्रमश अनुराधा, श्रवण, रेवती नक्षत्र नहीं होना चाहिए। अन्यथा द्वादशी द्वादश पुण्य हरण कर लेती है।

अथ विशेषो विष्णुधर्मे–
मैत्र्याद्यपादे स्वपितीह विष्णु· श्रुतेश्च मध्ये परिवर्तमेति।
जागर्ति पौष्नस्य तथावसाने न पारणं तत्र वुधः प्रकुर्यात्।।
एव भाद्रकार्तिकशुक्लद्वादश्योरनुसंध्येयम्। श्रावणशुक्लद्वादश्यां पवित्रारोपणम्। उर्जे व्रतमित्युक्तपुराणवाक्यात्।
पवित्रारोपणं विघ्नात् श्रावणे न भवेद्यदि।
कार्तिकावधि शुक्लार्के कर्तव्यम् ।। इति नारद । **शुक्लार्क-शुक्लद्वादशी।**
भाद्रशुक्ल श्रवणद्वादशी।
तत्रैकादश्या श्रवणं च तत्रोपवास ।
मात्स्ये-द्वादशी श्रवणर्क्षे च स्पृशेदेकादशी यदि।

स एव वैष्णवे योगो विष्नुश्रखलसञ्ज्ञक ।।
द्वादशी श्रवणर्क्ष च स्पृशेदेकादशी यदि।
स एव वैष्णवो योगो विष्णु श्रृखलसञ्ज्ञक ।।
तस्मिन्नुपोष्य विधिवत् द्वादशीं च यदा नरा ।
प्राप्नोत्यनुत्तमा सिद्धिं पुनरावृत्तिदुर्लभाम्।।
इद चैकादशी द्वादशयोरेक व्रतम्।
यदा तु द्वादश्यामेव श्रवण तदा व्रतद्वय। भविष्ये।
एकादशीमुपोष्यैव द्वादशी तामुपोषयेत्।
न चात्र विधिलोप स्यात् उभयोर्दैवत हरि । इति भविष्ये।
विधि लोप पारणान्त व्रतम् प्राहुरीति तदेतत् भिन्नम्।

अभिज्ञा – अनुराधा के प्रथम चरण मे विष्णु का शयन, श्रवण के मध्य मे परिवर्तन कार्तिक मे रेवती के अन्तिम चरण मे जागरण होता है– अत उसके अन्त मे पारण करना चाहिए। यदि इसके अतिरिक्त पारण न मिले तो अनुराधा का प्रथम्, श्रवण का द्वितीय, रेवती का चतुर्थ चरण अवश्य पारण मे त्याग कर दिया जाय। श्रावण शुक्ल द्वादशी को **पवित्रारोपण** किया जाता है। श्रवण मे पवित्रारोपण किसी कारण न हो सके तो कार्तिक के अन्दर कभी भी कर देना चाहिए।

विधि .– स्वर्ण, रजत, ताबा, रेशमी, डोरा या अन्य सूत से त्रिरावृत्त पवित्र बनावे। तीन सौ साठ ग्रन्थि युक्त होनी चाहिए। कटि प्रदेश तक लम्बा पवित्र वनावे उससे विष्णु का पूजन करे। १२ या १८ अगुल चौडा पवित्र बनाया जाता है। सभी वर्ग के लोगो को विष्णु का पूजन पवित्र चढाकर करने का विधान है तथा क्षमा प्रार्थना किया जाय। भाद्रशुक्ल श्रावण द्वादशी–यदि एकादशी को श्रवण हो तो वही उपवास मे मान्य हैं। मत्स्य पुराण के अनुसार एकादशी, द्वादशी श्रवण योग यदि मिल जाय तो व्रत मे उत्तम है। एकादशी, द्वादशी दोनो एक हो जायेगा। यदि श्रवण नक्षत्र द्वादशी मे दूसरे दिन हो तो पूर्व दिन एकादशी व्रत, द्वितीय दिन द्वादशी व्रत किया जाय। इस मे पारण परक विधि का लोप नहीं होता। दोनो के देवता विष्णु हैं। इस एकादशी का पारण द्वादशी मे अवश्य किया जाए यह नियम वामन द्वादशी से भिन्न द्वादशी के लिए है।

अस्यामेव मध्याह्ने वामनावतार । अत्रैव शक्रध्वजोत्त्थापनमुक्तम्।

कार्तिकस्य कृष्णद्वादशी वत्स द्वादशी। तत्र गो वत्स पूजा कार्या सा प्रदोषव्यापिनी ग्राह्या। दिनद्वये सति, सा च पूर्वा युग्मवाक्यात्।

निर्णयामृते–

वत्सपूजा वटश्चैव कर्तव्य प्रथमेऽहनि इत्युक्तेश्च।
सवत्सां तुल्यवर्णा च शीलिनीं गा पयस्विनीम्।
चन्दनादिर्भिरालिख्या पुष्पमालादिभिरर्चयेत्।।
तद्दिने तैलपक्व च स्थालीपक्वम् युधिष्ठिर।
गोक्षीर, गोघृतम् चैव दधि तक्र च वर्जयेत्।।
अथ द्वादश्या वर्ज्यानि।
कास्य मास मसूरान्न व्यायाम क्रोधमैथुने।
हिसामत्यन्तलौल्य च तैल निर्माल्यमपर धनम्।
द्वादश्यां द्वादशैतानि वैष्णव परिवर्जयेत्।। इति वृहस्पति ।
दिवा निद्रा परान्न च पुनर्भोजनमैथुने।
क्षौद्रं कास्यामिषे तैलं द्वादश्यामष्ट वर्जयेत्।। इति वृहस्पति ।
कास्य मास मसूरान्न चनकं कोदव तथा।
शाक मधु परान्नं च हन्युरष्टाविमे। व्रतमिति।

अभिज्ञा - इस तिथि को वामन भगवान का अवतार है। इन्द्र ध्वज का पूजन भी इसी दिन है। कार्तिक कृष्ण द्वादशी व्रत गोवत्स द्वादशी है यह सायकाल व्यापिनी ग्राह्य है। इस दिन गाय की पूजा होती है। यदि दोनो दिन प्रदोष मे द्वादशी हो तो युग्म वचन से प्रथम दिन ग्राह्य है।

पूजन प्रकार– सवत्सा सद्य व्यायी दूध देने वाली गाय की चन्दन, पुष्प माला, वस्त्राभरण आदि से पूजा करे। तैल पक्व पूआ आदि तथा गाय का दूध, दही, घी आदि वर्जित है। द्वादशी को निम्नलिखित १२ वस्तुओ का प्रयोग वर्जित है–

कास्यपात्र भोजन, मास, मसूर, व्यायाम, क्रोध, मैथुन, हिसा अजीर्ण भोजन, लोलुपता, तेल, देव द्रव्य, परधन लोभ।

वृहस्पति ने आठ वस्तुओ का त्याग कहा है। दिन में शयन, परान्न, पुन भोजन, मैथुन, मघु, कास्य पात्र भोजन, मास तेल। किसी मत से– कास्य, मास, मसूर, चना, कोदो, शाक, मधु परान्न ये आठ वर्जित हैं।

त्रयोदशी

अथ त्रयोदशी। सा शुक्ला पूर्वा कृष्णा परा।

उभयो प्रदोष व्यापिनी दिनद्वये तद्व्याप्तापराव्याप्तौ वा पूर्वैव।

यदाह सुमन्तु –

त्रयोदशी प्रकर्तव्या द्वादशी सहिता मुने।

विष्णोत्तरखण्डे–

पक्षद्वये त्रयोदश्या निराहारो भवेद्दिवा।

घटिका त्रिरस्तमितात् पूर्वस्नान समाचरेत्।

चैत्रकृष्णत्रयोदश्या।। **योग विशेष ।।**

स्कान्दे–

वारुणेन समायुक्ता मघौ कृष्णा त्रयोदशी।

गगाया यदि लभ्येत् सूर्यग्रहशतै· समा।।

शनिवारसमायुक्ता सा महावारुणी स्मृता।।

शुभयोगसमायुक्ता शनि शतभिषा यदि।

महामहेति विख्याता त्रिकोटि कुलमुद्धरेत।। इति।

चैत्रशुक्लत्रयोदशी।।

सा पूर्वोपोष्या। कृष्णाष्टमीत्युक्त सवर्तवाक्यात्।

अभिज्ञाः–त्रयोदशी शुक्ल पक्ष मे पूर्व, कृष्ण पक्ष मे पर ग्राह्य है। प्रदोष काल मे दोनो दिन रहने पर पूर्व ही मान्य है। त्रयोदशी द्वादशी युक्त व्रत करनी चाहिए। सूर्यास्त के पूर्व पर तीन दण्ड तक प्रदोष काल है। सूर्यास्त के पूर्व ३ दण्ड दिन शेष रहने पर स्नान करे।

चैत्र कृष्ण त्रयोदशी – वारुणी पर्व। चैत्र कृष्ण त्रयोदशी शनिवार योग होने पर महावारुणी तथा शतभिषा नक्षत्र और शनिवार दिन दोनो योग मिल जाये तो महा महावारुणी कहा जाता है। गगा स्नान करने से अतिशय पुण्य प्राप्त होता है।

चैत्र शुक्ल त्रयोदशी पूर्व दिन मे व्रत करने का विधान है।

चतुर्दशी

अथ चतुर्दशी।

सा च कृष्णा पूर्वा शुक्ला परा।

कृष्ण पक्षे चतुर्दशी चैवेत्युक्तापस्तम्बवाक्यात्। युग्मवाक्याच्च

बैशाखशुक्लानरसिह चतुर्दशी। सा च प्रदोषव्यापिनी।

स्कान्दे—

बैशाखस्य सिते पक्षे चतुर्दश्या सोमवारेऽनिलर्क्षके

अवतारो नृसिहस्य प्रदोषसमये द्विजा ।। प्रदोषलक्षण च कूर्मपुराणे।

प्रदोष त्रिमुहूर्तस्याद्रवावस्त गते तत।। इति।

अत्र मध्याह्ने नद्यादिजले नृसिहरूपव्रतोपक्रम, उक्तो नृसिहपुराणे—

ततो मध्याह्नवेलाया नद्यादौ विमले जले स्नान।

यथेत्युपक्रम्य, परिधाय ततो वासो, व्रतकर्म्मसमारभेत्।।

भाद्रशुक्लानन्तचतुर्दशी इयमुदयव्यापिनी।

स्कान्दे—

मुहुर्तमपि चेद् भाद्रे पौर्णमास्यां चतुर्दशी।

सम्पूर्णा ता विदुस्तस्या पूजयेद्विष्णुमव्ययम्।।

अत्र माधव· मुहूर्तमपीति त्रिमुहूर्तप्रशसायाम्। त्रिमुहूर्तमिति मुख्य· कल्प । द्विमुहूर्तमिति त्वनु कल्प इत्याह। उभय दिने उदययोगित्वे तु पूर्वैव सम्पूर्णत्वात्। अपि मध्याह्ने भोज्यवेलाया समुत्तीर्य सरित्तटे इत्यादि भविष्यपुराणान्मध्याह्नः पूजाकालो विधीयते, तथापि तत्र पूजाविध्यभावान्न तदव्यापिनी ग्राह्येति। इतिहासरूपार्थवादात् विष्णुपूजनात् प्राक्प्रत्यक्ष- विधिनोदय व्यापिन्या तस्यां पूजाविधानादिति।

अभिज्ञाः— चतुर्दशी कृष्ण पक्ष की पूर्वा शुक्ल पक्ष की परा मान्य है। बैशाख शुक्ल चतुर्दशी नरसिह चतुर्दशी प्रदोष व्यापिनी ग्राह्य है। बैशाख शुक्ल चतुर्दशी सोमवार कृतिका नक्षत्र मे नरसिह भगवान का जन्म सायकाल हुआ। कूर्म पुराण मे सूर्यास्त के बाद तीन मुहूर्त छ दण्ड तक प्रदोष काल कहा गया है। नरसिह पुराण के अनुसार मध्याह्न काल मे नदी के किनारे स्नान करके शुद्ध वस्त्र धारण कर नृसिह भगवान

का पूजन एव व्रत करे।

भाद्र शुक्ल चतुर्दशी अनन्त चतुर्दशी व्रत है। यदि सूर्योदय मे मुहुर्त मात्र भी (२ दण्ड) चतुर्दशी हो तदुपरान्त पूर्णमासी हो जाय तो वही अनन्त व्रत पूजा योग्य है। दो मुहूर्त या तीन मुहूर्त दोनो कहा गया है। यदि दोनो दिन चतुर्दशी सूर्योदय मे हो तो पूर्व दिन ही मान्य है। मध्याह्न मे कथा, पूजा का विधान है। इसमे इतिहास कथा प्रशसा परक वचन अपेक्षित है। विष्णु पूजन के प्रत्यक्षत उदय व्यापिनी मे पूजा विधान होता है।

कार्तिककृष्णचतुर्दशी नरकचतुर्दशी।

भविष्ये—

ततश्च तर्पण कार्य धर्मराजस्य नामभि ।

"यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च।।

औदुम्बराय दध्नाय, निलाय परमेष्ठिने।

वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय वै नम ।

वैवश्वताय कालाय सर्वभूतक्षयाय च।। अत्र यमदीपदानम्।

कार्तिकस्यासिते पक्षे चतुर्दश्यां निशामुखे।

यमदीपं वहिर्दद्यात् अपमृत्युनिवारणम्।।

फाल्गुनकृष्णचतुर्दशी शिवरात्रि । सा च निशा व्यापिनी।

माघकृष्ण चतुर्दश्यामादिदेवो महानिशि।

शिवलिङ्गमभूत्तत्र सूर्यकोटि समप्रभम्।।

तत्कालव्यापिनी ग्राह्या शिवरात्रि व्रते तिथिः। इतीशानसहितोक्ते ।

दिनद्वये निशीथ व्याप्तावव्याप्तौ वा प्रदोषव्यापिनी।

आदित्यास्तसमये काले अस्ति चेद्या चतुर्दशी।।

तद्रात्रिस्शिवरात्रिस्स्यात् सा भवेदुत्तमोत्तम्।। इतिकालिकापुराणात्।।

इदं व्रत शिवभक्तानां नित्यं।

परात्पर नास्ति शिवरात्रिः परात्परम।

न पूजयति भक्त्येशं रुद्रं त्रिभुवनेश्वरम्।

जन्तुः जन्मसहस्त्रेषु जायते नात्र सशय ।।

इति तत्प्रकरणे स्कान्दोक्तेः सर्वेषाम् तु काम्यमिदम्।

शिवरात्रिव्रत नाम सर्वपापप्रणाशनम्।
आ चण्डाल मनुष्याणा भक्तिमुक्तिप्रदायक।। इतीशान सहितोक्ते ।
प्रतिमास चतुर्दशी व्रते तु प्रदोषव्यापिनी ग्राह्या।

अभिज्ञा - कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी नरक चतुर्दशी है। धर्मराज को तर्पण करने का विधान भविष्य पुराण मे कहा गया है। मूल मे यमराज के चौदह नाम का उल्लेख है।

सायकाल यमराज को दीप दान करने का विधान है। इससे अपमृत्यु का शमन होता है। फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी शिवरात्रि, यह रात्रि व्यापिनी ग्राह्य है। रात्रि मे शिवलिग प्रकट हुआ। अत तत्काल व्यापिनी होनी चाहिए तथा दोनो दिन निशीथ व्यापिनी हो या न हो तो प्रदोष व्यापिनी करनी चाहिए। कालिका पुराण का वचन है— सूर्यास्त काल मे चतुर्दशी व्रत उत्तम है। शिव के आराधको के लिए यह नित्य व्रत है। शिव लिग पूजा का विधान है। व्रतो मे श्रेष्ठ इस व्रत का जो पालन नहीं करता तथा श्रद्धा पूर्वक शंकर जी की पूजा नहीं करता वह पशु योनि मे जन्म लेता है। शिवरात्रि व्रत सबके लिए काम्य व्रत है। ईशान सहिता के अनुसार— सभी वर्ण के लोगो के लिए यह व्रत भुक्ति मुक्तिदायक पाप नाशक है। प्रत्येक माह मे प्रदोष व्यापिनी चतुर्दशी शिवरात्रि व्रत के रूप मे ग्राह्य है।

पूर्णिमा

अथ पूर्णिमा। सा परा। ब्रह्मवैवर्ते—

भूतविद्धा न कर्तव्या दर्शपूर्णा कदाचन।

वर्जयित्वा मुनिश्रेष्ठ सावित्री व्रतमुत्तमम्।।

यदा तु चतुर्दशी अष्टादश नाडिका भवति।

तदा सावित्री व्रतमपि परदिने कार्यम्।

भूतोष्टादश नाडिकाभिर्दूषयत्य परां तिथिम्। इति स्कान्दोक्ते।

पूर्णिमा श्राद्ध नित्यम्। यदाह पितामह·।

अमावस्या व्यतीपात पौर्णमास्यष्टकासु च।

विद्वान् श्राद्धमकुर्वाणो नरकं प्रतिपद्यते।।

इति बैशाखपूर्णिमा विषये। भविष्ये—

बैशाखी कार्तिकी माघी तिथयोऽतीव पूजिता।

स्नानदानविहीनास्ता नरेयाः पाण्डुनन्दन।।

नरेयाः[1] नरकगामिनः इत्यर्थः।।

ज्येष्ठपूर्णिमा विषये। आदित्य पुराणे—

ज्येष्ठमासि तिलान्दद्यात् पौर्णमास्या विशेषत·।

अश्वमेधस्य यत्पुण्यं तत्प्राप्नोति न सशय।।

अभिज्ञाः—पूर्णिमा परा ग्राह्य है। सावित्री व्रत के अतिरिक्त अन्य पूर्णिमा चतुर्दशी विद्धा नहीं होनी चाहिए। यदि चतुर्दशी १८ दण्ड तक हो जाय तो सावित्री व्रत भी दूसरे दिन की करना चाहिए।

पूर्णिमा मे नित्य श्राद्ध विधान है। अमावस्या व्यतिपात योग पूर्णिमा तिथि चारो अन्वष्टका मे श्राद्ध न करने वाला नरक गामी (नरेया) होता है।

बैशाख, कार्तिक, माघ, पूर्णिमा व्रत अत्यन्त पुण्य दायक है। जो लोग इसमे स्नान दान नहीं करते हैं वे नरक गामी होते हैं।

ज्येष्ठ पूर्णिमा मे तिलदान का महत्व है।

आषाढ पूर्णिमा। इद मन्वादिरपि।
आषाढ पूर्णिमा कोकिला सा साय व्यापिनी।
भविष्ये–
आषाढपौर्णमास्यां तु संध्याकालमुपस्थिते।
सकल्पयेत् मासमेक श्रावणे प्रत्यह त्वहम्।।
स्नान करिष्ये, नियता व्रह्मचर्ये स्थिता सति।
भोक्ष्यामि नक्त भूशय्या करिष्ये प्राणिन दयाम्।। अत्रैव व्यासपूजा।
अत्र मध्याह्नव्यापिनी दिनद्वये तथात्वे तु परैवेति।
व्यास पद्धतावुक्तम्। श्रावणपूर्णिमायामुपाकर्म।। याज्ञवल्क्य –
अध्यायानामुपाकर्म श्रावण श्रवणेन वा।
हस्तेनौषधि भावे वा पचम्या श्रवणस्त्वपि।।
भाद्रपूर्णिमाया सावित्री व्रतम्।
तत्र पूर्वा युग्मवाक्यात् उक्त व्रह्मवैवर्तवाक्याच्च।
फाल्गुनपूर्णिमाया होलिकोत्सव.। सा च प्रदोषव्यापिनी।
यदाह नारद –
प्रदोषव्यापिनी ग्राह्या पूर्णिमा फाल्गुनी सदा।
तस्यां भद्रा मुखं त्यक्त्वा पूज्या होला निशामुखे।
दिनद्वये तथा व्याप्तौ परा।
भद्रायां दीपिता होली राष्ट्र भंगं करोति वै। इतिपुराणसमुच्चयात्।

अभिज्ञाः– आषाढ पूर्णिमा कोकिला व्रत है। साय व्यापिनी मान्य है। आषाढ पूर्णिमा को सायकाल व्रत का सकल्प करे। श्रावण मे प्रतिदिन सकल्प कर स्नान करे तथा प्रतिज्ञा करे– एक माह तक श्रावण पर्यन्त व्रह्मचर्य का पालन करते हुए रात्रि भोजन तथा भूमि शयन करे। जीव हिसा न करे। इसी दिन व्यास पूजा की जाती है। उसमे मध्याह्न व्यापिनी पूर्णिमा होनी चाहिए। यदि दोनो दिन पूर्णिमा मध्याह्न मे है तो दूसरे दिन व्यास पूजा मे विहित है। व्यास पद्धति मे कहा गया है कि **श्रावण पूर्णिमा** मे उपाकर्म होता है। श्रावण मे श्रवण नक्षत्र मे श्रावणी कर्म विहित है। यदि श्रवण न मिले तो पचमी मे हस्त नक्षत्र मे उपाकर्म किया जाय। यदि पूर्णिमा मे ग्रहण हो या नक्षत्र न प्राप्त हो तो भद्रा मे रक्षा वन्धन नहीं करना चाहिए। न+औषधि रक्षार्थ–रक्षावन्धन औषधि। **भाद्र पूर्णिमा** मे सावित्री व्रत चतुर्दशी पूर्णिमा इस युग्म वचन के कारण पूर्वा ग्राह्य है।

फाल्गुन पूर्णिमा होलिकोत्सव प्रदोष काल व्यापिनी ग्राह्य है। नारद का वचन है– फाल्गुनी पूर्णिमा प्रदोष व्यापिनी माननी चाहिए। भद्रामुख का त्यागकर होलिका पूजन किया जाय। यदि दोनो दिन प्रदोष मे हो तो दूसरे दिन मान्य है। भद्रा मे होलिका दाह राष्ट्र भग करता है।

सा च पूर्वदिने प्रदोषव्यापिनी भद्रा युक्ता च न परदिने।
तदा पूर्वदिने एव रात्रौ भद्रान्ते कार्या।
तदुक्तम् भविष्योत्तरे–
दिनार्द्धात्परतो या स्यात् पूर्णिमा फाल्गुनी यदि।
रात्रौ भद्रावसाने तु निशीथान्तेऽपि दीपयेदिति।।

यदा पूर्वरात्रौ प्रदोषव्याप्त्यभावे तत्सत्वेऽपि भद्रारहित· कालो न प्राप्यते। उत्तर दिने च प्रदोष पूर्णिमाभावस्तदा भद्रापुच्छे कार्य·।।

यदाह लल्ल– **पृथिव्या यानि कार्याणि शुभानि त्वशुभानि च।**
तानि सर्वाणि सिद्धयन्ति विष्टि पुच्छे न सशय ।। इति।
भद्रापुच्छं ज्योतिस्शास्त्रात् वोधव्यमिति।।
पूजामन्त्रश्च–
''अस्माभिः भयसन्त्रस्तै· कृता त्वं होलिवालिशै ।
अतस्त्वाम् प्रपूजयामि भूते भूतिप्रदा भवेत्।। इति।
एवं अस्माभिर्भयसन्त्रस्तै कृता त्वं होलिके यत
अतस्त्वा पूजयिष्यामि भूते भूतिप्रदा भव।। धर्मसिन्धौ।

अभिज्ञा ·- यदि पूर्व दिन प्रदोष व्यापिनी हो तथा दूसरे दिन न रहे तो भद्रा के समाप्त होने पर रात्रि के अन्तिम प्रहर मे होलिका दहन किया जाय। भविष्योत्तर का वचन प्रमाण है। यदि पूर्व दिन प्रदोष मे पूर्णिमा न हो अथःवा रहते हुए भी रात्रि मे भद्रा रहित काल न मिले तो भद्रा पुच्छ मे दहन किया जाय।

सम्पूर्ण शुभाशुभ कर्म भद्रा पुच्छ मे करने पर सिद्ध होते है। भद्रा पुच्छ का निर्णय ज्योतिष के अनुसार जानना चाहिए।

मन्त्रार्थ – **हे होलिके! भयभीत होकर हम लोग तुम्हें वनाये हैं।**
इसीलिए पूजा कर रहे है, हे भूते कल्याणकारी बनो।

अमावस्या

अथअमावस्या।

सा च परा युग्मवक्यात्।

उक्त व्रह्मवैवर्तवाक्याच्च। अत्र श्राद्ध नित्यमुक्तम्।

एकोदिष्ट श्राद्धे त्वष्टमुहुर्तव्यापिनी।

मात्स्ये–

अष्टमे भास्करो यस्मात् मन्दी भवति भास्कर ।

तस्मादनन्त फलदस्तत्रारम्भो विशेषतै ।।

व्यास –

कुतुपे प्रथमे भागे एकोदिष्टमुपक्रमेत्।

कुतुपोऽष्टमुहुर्त , पार्वण त्वेकादशद्वादशमुहुर्तयो ।

अपराह्नत· पितृणामिति श्रवणात्।

उभयत्रापराह्नव्याप्तौ त्वाधिक्यव्यापिनी।

अपराह्न द्वयव्यापिन्यमावस्या यदा भवेत्।

तत्राल्पत्वमहत्वाभ्याम् निर्णयः पितृकर्मणि।

शिवराघव सम्वादे–

अमावस्या तु यदा हि स्यादपराह्ने द्वये समा।

क्षये पूर्वा परा वृद्धौ समापि च परा स्मृता।।

दिनद्वये पराह्नव्याप्त्यभावे तु परैव। पूर्वदिन एवापरास्त व्याप्तौ।

वौधायन –

घटिकैकाप्यमावस्या प्रतिपत्पूजयेत्तदा।

भूतविद्धैव सा ग्राह्या दैवे पित्र्ये च कर्मणि।।

प्रतिपदि घटिकैकापि कर्मकाले। नास्ति चेदित्यर्थः।

ज्येष्ठायां वटसावित्री व्रतम्। भाद्रामाया कुशोत्पाटिनी।

कार्तिकामाया दीपावली। सा प्रदोषव्यापिनी ग्राह्या।

अभिज्ञा .- अमावस्या–प्रतिपदा इस युग्म वचन से परा ग्राह्य है। एकोदिष्ट श्राद्ध मे अष्टम मुहूर्त व्यापिनी चाहिए। अष्टम मुहूर्त मे सूर्यमन्द होते हैं। अत उस काल मे श्राद्धारम्भ अनन्त फल दायक है।

कुतुप वेला मे श्राद्ध विधान है। एकोद्दिष्ट पूर्वाह्न मे विहित है।

कुतुप = अष्टम मुहूर्त १६ दण्ड के काल को कुतुप कहते है। पार्वण ग्यारहवे, वारह्वे मुहूर्त मे किया जाय। यदि दोनो दिन अपराह्न मे हो तो जिस दिन अधिक हो उसी दिन किया जाय। पितृकर्म अपराह्न मे कहा गया है। यदि अमावस्या दोनो दिन अपराह्न मे हो तो क्षय तिथि होने पर पूर्व और वृद्धि होने पर परदिन ग्राह्य है। दोनो दिन समान स्थिति होने पर परदिन विहित है। वौधायन का मत है– यदि एक दण्ड भी प्रतिपद हो तो चतुर्दशी विद्धा मे ही किया जाय। कर्म काल मे एक दण्ड भी प्रतिपद नहीं होनी चाहिए।

ज्येष्ठ अमावस्या वट सावित्री व्रत है, भाद्रपद अमावस्या कुशोत्पाटिनी, कार्तिक अमावस्या दीपावली यह सब प्रदोष व्यापिनी ग्राह्य है।

ज्योतिर्निबन्धे–

तुला संस्थे सहास्रांशौ प्रदोषे भूतदर्शयो.।
उल्का हस्तानरा. कुर्य्यु पितृणा मार्गदर्शनम्।।
आदित्यस्यास्ते प्रदोषसमये लक्ष्मीं पूजयित्वा यथाक्रमम्।
दीपवृक्षास्तथा कार्या शक्त्या देवगृहेषु चेत्।। इत्यादि।
पौषमाघयोरमा विषये।

भारते–

अमार्कपात श्रवणैर्युक्ता चैत्पौष माघयो॰।
अर्द्धोदयस्तविज्ञेय. सूर्यकोटि ग्रहैस्समः।।
दिवैवयोगः शस्तोऽयं योगोऽयं न तु रात्रौ कथञ्चन्।
सर्वामाविषये।

शख –

अमावस्या तु सोमेन सप्तमी भानुना तथा।
चर्तुथी भूमिपुत्रेण सोमपुत्रेण चाष्टमी।।
चतस्त्रस्तिथयस्त्वेता सूर्यग्रहणसन्निभा। इति।
अत्र अक्षय्योदत्तः स्वकर्तव्यविषयो नियतः। इति।

सकल्पव्रतमिति तन्न अग्निहोत्र सन्ध्या वन्दनादिविषये सकल्पेऽतिषु प्रशक्ते। किन्त्वभियुक्त प्रसिद्धविषयस्संकल्पविशेषाद् व्रतम्। न च सकल्पयेदित्यन्वयम् वाच्यम्।

अभिज्ञा :- ज्योतिर्निवन्ध के अनुसार सूर्य के तुला राशि मे होने पर चतुर्दशी अमावस्या के सायकाल हाथ मे उल्का लेकर पितृगणो को मार्गदर्शन पुरुष करे। सायकाल लक्ष्मी का पूजन करके देव मन्दिरो मे आकाश दीप स्थापित करना चाहिए।

पौष तथा माघ के अमावस्या के सबध मे महाभारत के अनुसार– अमावस्या को रविवार व्यतिपात योग, श्रवण नक्षत्र का योग यदि पूष या माघ मे हो तो प्रात अरुणोदय वेला कोटि सूर्य ग्रहण के समान पुनीत है। यह पुण्य काल दिन मे ही मान्य है। रात्रि मे नहीं माना जाता है।

प्रत्येक अमावस्या के सबध मे शख मुनि का मत है कि सोमवार के दिन अमावस्या, रविवार को सप्तमी, मगलवार को चतुर्थी, बुधवार को सूर्योदय मे अष्टमी तिथि, सूर्य ग्रहण के समान पुण्यकारक है। इसमे किया गया दान अक्षय होता है। स्व नित्य नियम की भाति विना सकल्प के भी इस नियम का पालन करे। इसमे सध्या वन्दन की भाति सकल्प अति आवश्यकता नहीं है। सकल्प आसक्ति है। फलाभिलाषा से क्रियमाण व्रत सकल्पकात्मक है।

पाकं पचति दानं दद्यादित्यदिवत्।
अतिशयानुग्रहार्थप्रयोगोपपत्तेरित्याहुः।। तत्र देवल–
अभुक्त्वा प्रातराहारं स्नात्वाचम्य समाहित.।
सूर्य्यायव्रंत देवताभ्यश्च निवेद्य व्रतमाचरेत्।। इति।
सायं प्रातर्मनुष्याणामशनं देवनिर्मितम्।
नान्तरा भोजनं कुर्यादग्निहोत्रसमोविधिः।। इतिमनुवचनात्।
प्राप्तभोजनद्वयस्थ पूर्वदिन एकमेव
कृत्वा व्रतदिने प्रातर्व्रतमाचरेदिति।। तदर्थः।
सकल्पो भारते–
गृहीत्वौदुम्वरं पात्रं वारिपूर्णमुदङ्मुखः।
उपवास तु गृह्णीयात् यद् वा संकल्पयेद्वुध ।।

उदुम्भर ताम्रमय पात्र तदभावे अपि सकल्प इति।
यद्धेत्वस्मार्थ इति। समयप्रदीपे।
नक्तव्रतादावपि उक्त विधिरिति कल्पतरौ।

अभिज्ञा .- सकल्प तथा कर्म करना समानार्थक होने से पुनरुक्ति दोष हो जायेगा इसका समाधान करते है जैसे पाक पचति– दान दद्यात् यह कर्म एव क्रिया समानार्थक है,अतिशय अनुग्रह के भाव से दोनो शब्द कहा गया है। उसी प्रकार 'कर्मम् करिष्ये' यह सकल्प भी विहित है। देवल का वचन है– प्रात आहार–भोजन न करके, स्नान करके आचमन करके, सावधानी से सूर्य तथा अन्य देवताओ का पूजन करके, व्रत करे।

यह उदाहरण समान अर्थ के लिये दो क्रिया का प्रयोग दर्शाया गया है।

प्रात साय देवता–निमित्त पाक तैयार करे। मध्य मे भोजन न करे। देव–प्रसाद ग्रहण करे। इस प्रकार का व्रत अग्निहोत्र के समान पुण्य दायक है। प्राप्त भोजन द्वयस्थ का भाव है व्रत के पूर्व दिन मे एक बार भोजन करे। प्रात काल व्रत के दिन उदुम्बर = ताम्र पात्र मे जल पुष्प चन्दन से देवता को अर्घ्य दिया जाय। पात्र के अभाव मे हाथ से ही जल दिया जाए। नक्त व्रत मे भी इसी प्रकार सकल्प उपवास विधि है।

व्रतविधिः

अथ व्रतविधि । तथा च भगवन्सूर्य, भगवत्यो देवताअद्य
इदं व्रतमहमाचरिष्यामि इति प्रयोग.।
अनेकदिन साध्यव्रते तु अद्य दिनारभ्य इति योज्यम्।
गृहीत व्रत पालनीयम्।
छागलेय –
पूर्वं व्रतं गृहीत्वा यो नाचरेत् काममोहित ।
जीवन्भवति चाण्डालो मृत.श्वा चैव जायते।।
अत्र विशेषमाह देवल –
सर्व भूतमय व्याधि. प्रमादो, गुरु शासनम्।
अत्र व्रतघ्नानि कीर्तयन्ते सकृदेतानि शास्त्रत·।।
अत्र सकृदिति वचने नावृतौ दोष एव।
अशौचेऽपि न व्रतत्याग·। न व्रतीनां व्रते इति विष्णुना विधानात्।
प्रारब्धव्रतानामशौचेऽपि न त्यागो न त्वारम्भ इति तदर्थः।
उपवासदिने श्राद्धप्राप्तौ कात्यायन ।
उपवासो यदा नित्यः श्राद्धे नैमित्तिक भवेत्।
उपावासं तदा कुर्यात् आघ्राणं पितृसेवितम् इति।
स्त्रियास्त्वारब्धव्रतमध्ये रजो योगादि मध्ये न कारयितव्ये।
कायिकं तु स्वयं कुर्यात्। इति योगिश्वर ।
पैठिनसिरपि–
भार्या पत्युर्व्रत कुर्याद् भार्यायाश्च तथा व्रतं।
असामर्थ्ये पतिस्ताभ्यां व्रतभंगो न जायते।।
यद्यपि स्त्रीणाम् व्रतादौ पृथगनधिकार·।
यदाह मनु –
नास्ति स्त्रीणाम् पृथग्यज्ञो न व्रत नाप्युपोषणम्।
पतिं सुश्रूषते या तु तेन स्वर्गे महीयते।। इति।
मनुरपि–
पत्यौ जीवति या नारी उपोष्य व्रतमाचरेत्।
आयुस्सहरते भर्तुर्नरकं चैव गच्छति।।

तथापि पतिशुश्रूषणाविरोधि व्रतादिकर्म स्त्रिया पत्यनुमत्या पृथगपि कार्यम्। मन्वादिनिषेधस्य पतिशुश्रूषास्तावकत्वात्। भार्याभर्तुरनुज्ञाता या व्रतोपवासनियमे जपादीनामभ्यास स्त्रीधर्म इति। शृगी ऋषिवाक्याच्च।
भार्याभर्तुमते नैव व्रतादोषान् चरेत्। इतिकात्यायनोक्तेश्च।
विधवायास्तु पित्राद्याज्ञाधिकार । इति हैमाद्रौ।

अभिज्ञा –कुश अक्षत जल दाहिने हाथ मे लेकर सकल्प करे– हे सूर्य तथा देवता व देवियो हम इस व्रत का पालन करेगे। प्रारम्भ व्रत का उद्यापन किये बिना त्याग नही करना चाहिये। अन्यथा चाण्डाल के तुल्य होता है। दूसरे जन्म मे कुत्ता योनि मे जन्म होता है।

व्रतत्याग के कारण– अन्य जन्तुओ से पीडा तथा रोग होता है। प्रमाद होने पर गुरु का आदेश लेकर प्रायाश्चित करे।

व्रत नष्ट–कर वचन का अर्थ करते है– **असकृज्जल्पानाच्च सकृत्ताम्बूल भक्षणात्।** यहा स कृत शब्द की आवृति मे पुनरुक्ति दोष नहीं है। **"सकृदंशो निपतति, सकृत्कन्याप्रदीयते। सकृदाह ददानीति त्रीण्येतानि सकृत् सकृत्।** यह शास्त्र वचन है। अशौच = सूतक जनन मरण काल मे भी व्रत का त्याग नहीं होता है। यदि उपवास के दिन पिण्ड दान करना पडे तो व्रत का पालन करे। पितृपिण्ड का आघ्राण किया जाय। यदि स्त्री रजस्वला हो जाये तो वह अपना व्रत करे–पूजन न करे। पति के या अन्य का प्रतिनिधि के रूप मे स्त्री व्रत नहीं करेगी। असमर्थ की स्थिति मे भार्या पति का व्रत तथा पति पत्नी का व्रत करे। पति के आज्ञा के विना पत्नी को पृथक् व्रत पूजा प्रायश्चित का विधान नहीं है। पति के अनुमति से पत्नी व्रत का आचरण करे। विधवा हो जाने की स्थिति मे पिता आदि अपने सरक्षक की अनुमति लेकर स्त्री व्रत उपवास धर्माचरण करे। यह हेमाद्रि का वचन है।

मार्कण्डेये–
नारी, या त्वननुज्ञाता भर्त्रा पित्रा सुतेन वा।
विफलं तद्भवेत्तस्याः यत्करोत्यौर्ध्वदैहिकम्।। इति।
भविष्ये–
क्षमा सत्यं दया दानं शौचमिन्द्रियनिग्रह·।

देवपूजाग्नि वहन संन्तोष स्तेयवर्जनम्।।
सर्वव्रतेष्वय धर्म सामान्यो दशधा स्मृतम्। इति। देवल—
व्रह्मचर्यमहिसा च सत्यमाहारलाघवम्।
व्रतेष्वेतानि चत्वारि चरितव्यानि नित्यश.।। नक्तव्रते विशेषस्तत्रैव।
हविष्य भोजनं स्नानं सत्यमाहारलाघवम्।
देवकार्यामधश्शय्यां नक्तं भोजी षडाचरेदिति।।
हविष्य, यवास्तदलाभे व्रीहय । तदलाभे तिला ।
कोद्रव, चणक, गौरवय, मटर, मसूर, चेनक, कुसितान्न वर्जम्।
गव्य पयो दधि घृतञ्च, सैन्धव मानसञ्च लवणम्।
नक्त व्रतकालो भविष्ये—
मुहुर्तो न दिनं केचित्प्रवदन्तिमनीषिण.।
नक्षत्रदर्शनात्मकमहमन्ये जनाधिप।। नारसिहेऽपि—
आत्मद्विगुणछायायां सतिष्ठते यदा रवि.।
सौवरक विजानीयान् नरक निशि भोजनम्।

अभिज्ञा :- पिता पुत्र भाई आदि के अनुमति के अभाव मे स्त्री द्वारा किया गया सम्पूर्ण धर्म कार्य एव पितृ कर्म निष्फल हो जाता है। **भविष्य पुराण**। देवल मुनि के मतानुसार धर्म का यह सामान्य १० नियम हैं। क्षमा, सत्य, दया, दान, शौच, इन्द्रिय निग्रह, देव पूजा, हवन, सन्तोष, अस्तेय। व्रत मे व्रह्मचर्य, अहिसा सत्यभाषण, आल्पाहार यह चार नियम धारण करना चहिये। नक्त व्रत—नियम। हविष्य भोजन, स्नान, सत्य—अल्पाहार देवपूजन भूमिशयन, यह छ नियम आवश्यक है। हविष्य के अन्तर्गत यव—व्रीहि=धान, तिल, गेहू तथा गाय का दूध दही घी है। व्रत में कोदो, चना, मटर, मसूर, चेन कुल्थी त्याज्य है। हविष्य मे सैन्धव नमक ग्राह्य है। नक्त व्रत मे भोजन का समय एक मुहुर्त दिन शेष रहते हुये मान्य है। कुछ लोग तारा उदय के पूर्व तक मानते हैं। नरसिह पुराण के मत से साय अपनी छाया द्विगुण हो जाय, सूर्य पश्चिम दिशा मे लम्बायमान हो वह नक्त व्रती के भोजन का काल है। नक्तव्रती को रात्रि भोजन वर्जित है।

उपवासविधि·

उपवासव्युत्पतिर्भविष्ये—

उपाकृतस्य दोषेभ्यो यस्तुवासो गुणैस्सह।
उपवास स विज्ञेय· सर्वभोगविवर्जित ।।
दोषा - रागद्वेषमात्स्र्यादय ।
दया क्षान्तिरनुसूया शौचमनालसो।
मङ्गल्यमकार्यरोधमस्पृहेति गुणा गौतमोक्ता —
इद च फलम् साधनस्थस्योपवासस्यस्वरुपम्। उपवासपदार्थस्तु।
स्मृति पुराणव्यवहारो निरुढ निराहारावस्थानमात्रम्। इति।

शातातप —

गन्धालङ्कारपुष्पाणि वस्त्रमाल्यानुलेपनम्।
उपवासे न दुष्यन्ति दन्तधावनमज्जनम्।।
कुत्रचित् दतधावनं निषिध्यते।
तत्र काष्ठनिषेध इति योगीश्वरः।
उपवासदिने तु पत्रादिदन्तधावनानुज्ञातम्।

पैठिनसि —

अलाभे वा निषेधे वा काष्ठाना दन्तधावने।
पर्णादिना विधीयेत जिह्वोल्लेख सदैव हि।। इति विशेष ।

व्यास —

अलाभाद् दन्तकाष्ठाना निषिद्धानां तिथौ तथा।
अपां द्वादश गण्डूषैर्मुखशुद्धिर्विधीयते।।
जिह्वोल्लेखस्तु पत्रादिनात्रापि वोध्यम्।

देवल —

असकृज्जलपानाच्च सकृत्ताम्बूलभक्षणात्।
उपवासः प्रणश्येत दिवा स्वप्नाक्षमैथुनै·।।
अत्यये जलपानेन नोपवास· प्रणश्यति।
अत्यये = नाशे सम्भाव्यमाने।
एवं चाचमनातिरिक्त जलपानम् इति शास्त्रार्थ·।

वृद्ध शातातप –

उपवास द्विज कृत्वा तत ब्राह्मणभोजनम्।

कुर्य्यात्तेनास्य सगुण उपवासो हि जायते।। इति व्रतविधि ।

अभिज्ञा .- उपवास, उप = दोषो से उपरत, वास = गुणो के साथ वास, उपवास कहलाता है। राग–द्वेष, ईर्ष्या आदि दोष है, इन से दूर रहे। गुण– दया, क्षान्ति, निन्दा से बचना, पवित्रता, आलस्य त्याग, मगलमय आचरण, अकार्य त्याग, अस्पृहा गौतम मुनि के मत से साधक को इन गुणो को अपनाना चाहिये।

उपवास = व्रत, स्मृति, पुराण, व्यवहार द्वारा प्रतिपादित नियमानुसार निराहार को उपवास कहते है।

शातातप के अनुसार– गन्ध, अलकार पुष्प, वस्त्र, माला, अनुलेपन, दन्तधावन, स्नान आदि से व्रतोपवास भग नही होता है। किसी किसी व्रत मे दन्तधवन का निषेध है। वहा काष्ठ के दातुन का निषेध है। पत्ते से मुख शुद्धि, १२ बार कुल्ला, तथा पत्र आदि से जिह्वाशुद्धि करने का विधान है। दिवाशयन, द्यूत, मैथुन, ताम्बूल व बार–बार पानी पीने से व्रत भग हो जाता है। प्रायश्चित हेतु नारायण अष्टाक्षर मत्र का एक सहस्त्र जप किया जाये। आचमन को जल पीना नहीं कहते हैं। प्राणसकट की स्थिति मे केवल जल ग्रहण किया जा सकता है।

वृद्ध शातातप के मतानुसार– द्विज उपवास करके अन्त मे ब्राह्मण भोजन कराकर पारण करे तभी उपवास सफल होता है।

मलमासविधिः

अथमलमासविधिः।

तत्र जाबालि –

नित्य नैमित्तिक कुर्याच्छ्राद्धं कुर्यान्मलिम्लुचे।

तिथिनक्षत्रवारोक्तं काम्यं नैव कदाचन।।

तथा च स्मृति –

यदन्यगतिकं नैमित्तिकं च तदेव कार्यम्।

अनन्यगतिक कुर्यान्नित्य नैमित्तिक तथा। इति।

वृद्धमनु –

"अग्न्याधानं प्रतिष्ठा च, यज्ञदान व्रतानि च।

वेदव्रत वृषोत्सर्ग चूडाकरणमेखलम्।।

व्रतारम्भाभिषेकं च मलमासे विवर्जयेत्।

वापीकूपतडागादि प्रतिष्ठा यज्ञकर्म च।।

गृह्य परिशिष्टे–

अवषद्वार होमाश्च पर्वा ग्रहणकं तथा।

मलमासे तु कर्तव्या कर्म नैव विवर्जयेत्।

अवषद्वार-होमः वलिवैवश्वदेवाग्नि होत्रादि ।

पर्व = दर्शपौर्णमासौ, तथाच कर्तव्यादि कर्माणि।

सन्ध्यादि कर्माणि नित्यान्यपि मलिम्लुचे।

षष्ठी ज्याग्रहणाधान चातुर्मास्यादिकान्यपि।।

महालयाष्टका श्राद्धे पाकमाद्यपि कर्मयेत्।

स्पष्टमास विशेषाख्य विहितं कर्म वर्जयेन्मले।।

यम–

चन्द्रसूर्यग्रहे दानं श्राद्धस्नानं जपादिकम्।

कर्माणि मलमासेऽपि नित्यं नैमित्तिकं तथा।। इति।

अभिज्ञा :- मलमास या अधिक मास मे नित्य नैमित्तिक कर्म त्याज्य नहीं है। स्मृति द्वारा मास, तिथि, नक्षत्र मे करणीय विहित कर्म अधिक मास मे नहीं करना चाहिये। अत्यावश्यक कर्म किया जा सकता है।

अधिक मास मे वर्जित कर्म– अग्निहोत्र, देवप्रतिष्ठा, यज्ञ, दान, व्रत, वृषोत्सर्ग, मुण्डन, उपनयन, राजतिलक। अधिक मास मे जलाशय, कूप प्रतिष्ठा यज्ञादि कर्म नही करना चाहिये। नित्यकर्म वलि वैश्व देव, नित्य हवन, दर्श पौर्णमास कर्म, सध्या वन्दन आदि कर्म मलमास मे भी किया जाय। षष्ठीपूजन, चातुर्मास्य, महालय, अन्वष्टका श्राद्ध, पाक कर्म मलमास मे भी किया जाये। विशेष मास विहित कर्म मल मास मे वर्जित है। ग्रहण काल का दान, जप, हवन आदि विहित कर्म अधिक मास में भी करणीय हैं। वृद्ध मनु के अनुसार नित्य नैमित्तिक कर्म अधिक मास मे वर्जित नही है।

वृद्धमनु –

कर्मवार्द्धुषिके भृत्ये श्राद्ध कर्मणि मासिके।
सपिण्डी करणे नित्ये नाधिमासं विवेर्जयेत्।।
तीर्थस्नानं जपो होम यव व्रीहि तिलादिभिः।
जात कर्मान्त्यकर्माणि नव श्राद्धं तथैप च।।
भरणी त्रयोदशी श्राद्धं श्राद्धान्यपि च षोडश।
चन्द्रसूर्य ग्रह स्नानं श्राद्धदानजपादिकम्।।
कुर्यात् एतानि कर्माणि मलमासेऽपीति सबंधः।
मासिके = श्राद्ध कर्मणि। अमावस्याया इत्यर्थ.।
नित्यदाने होमौअत्रोपासन·। अत्यकर्माणि = दाहादीनि।

मात्स्ये–

वर्षे चाहरहः दानं च प्रतिवत्सरम्।
गोभूतिलहिरण्याना मासेऽपि स्यान्मालिम्लुचे।।

मरीचि –

मन्वादौ युगादौ च मासयोरुभयोरपि।

हारीत –

असंक्रान्तेऽपि कर्तव्यमाह्निक प्रथमं द्विजै·।
तथैव मासिक श्राद्धं सपिण्डीकरणं भृगु ।।
मलमास मृताना तु यच्छाद्धं प्रतिवत्सरम्।
मलमासे तु तत्कार्य नान्येषा कदाचन।।

अन्यच्च–

प्रत्यब्द द्वादशे मासि कार्या पिण्ड क्रिया सुतै ।
कदाचित् त्रयोदशेऽपि स्यात् आद्य मुक्ता तु वत्सरम्।।
कदाचित् त्रयोदशेऽपि स्यादित्यस्यपवाद ।

आद्यमित्यादि। अस्यायमर्थ । यदि द्वादश एव मासो मलिम्लुचस्तदा मलिम्लुचे एव प्रथमाब्दिकं कार्यम् न तु त्रयोदशे। एव शुद्धमासमृताना प्रथमाब्दिकम्।

मध्ये मलिम्लुचे मासिकं कार्यमाब्दिकान्तर तु त्रयोदशे इति शुद्धे एव यदा मध्ये मलमासः पतति तदापि शुद्धे एव आब्दिक मलमृताना शुद्धे प्रथमाब्दिकं मले। आब्दिकान्तरम् इति निर्गलितार्थः।

अभिज्ञा :- नित्यकर्म = जन्मदिनोत्सव, भृत्य–कर्म–मासिक श्राद्ध कर्म, सपिण्डी करण कर्म, अधिक मास मे भी होता है। तीर्थ स्नान, हवन जातकर्म, अन्त्येष्टि कर्म, प्रथम मासिकादि श्राद्ध, विविध श्राद्ध, चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण मे दान, नैमित्तिक कर्म मलमास मे भी किया जाना चाहिए। स्मृति का उल्लेख मूल मे है। प्रथम मासिक श्राद्ध असक्राति माह काल मे भी विहित है। दैनिक श्राद्ध भी विहित है। मलमास मे मृत व्यक्ति का प्रतिवर्ष मे किया जाने वाला श्राद्ध भी विहित है। मलमास मे मृत व्यक्ति का प्रतिवर्ष मे विहित श्राद्ध मलमास मे किया जाय। दूसरे का नही। बारहवे मास मे प्रतिवर्ष पुत्र को पितृ–पिण्डदान करना चाहिये। कभी कभी अधिक मास पडने पर प्रथमवर्ष के उपरान्त तेरहवे माह मे प्रथम वार्षिक पिण्ड दान करना चाहिये। यदि बारहवा मास अधिक मास है तो अधिक मास मे ही प्रथम वार्षिक श्राद्ध किया जाय। तेरहवे माह मे नहीं किया जाय।

यदि शुद्ध मास मे मृत्यु हो और मध्य मे मलमास पड जाय तो शुद्ध मास आने पर अर्थात् तेरहवे माह मे प्रथम वार्षिक श्राद्ध होना चहिए। आदि का अन्तर का यही भाव है। वर्ष पूर्व होने के पूर्व ही प्रथम वार्षिक श्राद्ध करने से पितर अप्रसन्न रहते है। परिवार को कष्ट होता है।

संक्रान्ति विचारः

अथ संक्रान्तिविचार ।

राजमार्तण्डे–

सक्रान्तौ प्राक्पश्चाच्च नाड्यः षोडश पुण्यदाः।

अर्द्धरात्रि पुरस्ताच्चेत् पूर्वाहान्त्यदले भवेत्।

अर्द्धरात्रपरस्ताच्चेत् पराह्नान्त्यदले भवेत्।।

यद्यर्द्धरात्रमेव स्यात्तदा पुण्य दिनद्वयम्।

देवीपुराणे–

मानार्द्धि भास्करे पुण्यमपूर्णे शर्वरी दले।

सम्पूर्णे तूभयोर्देयमित्येके परेऽहनि।।

पुण्य पूर्वदिने कर्के संक्रमेऽर्कोदयात् पुरा।

पुण्यं परदिने नक्तम् सक्रमेऽस्तमयोत्तरम्।।

उदयात्प्रागुपर्य्यात् सध्या नाडी त्रयं भवेत्।

प्रात· कर्कस्थ संक्रांतौ पुण्यं परदिने भवेत्।।

सायं मकरसंक्रांतौ पुण्यं पूर्वदिन मतम्।

गार्ग्यश्च–

यदास्तमनवेलायां मकरं याति भास्कर·।

प्रदोषे चार्धरात्रे वा तदा पुण्यं परेऽहनि।।

अर्द्धरात्र तदूर्ध्व वा सं

पूर्वमेव दिनं ग्राह्यं यावन्नोदयते रविः। वा शब्द इवार्थे।

सिंह कुम्भवृष वृश्चिक कर्के पूर्वदिने ग्रहतोऽति फलदा.। इति नाम।

मध्यतो अज घट संक्रमणेताः शेषराशिषु परस्त्विति।

विंशत्तिर्वा षोडशेति शेषः।

अभिज्ञा–संक्रान्ति विचार– सक्रान्ति काल के पहले तथा बाद मे १६ या २० दण्ड पुण्य काल होता है। अर्द्धरात्रि के पूर्व सक्रान्ति हाने पर पूर्व दिन मे दोपहर वाद पुण्यकाल होता है। निशीथ के पश्चात् सूर्योदय तक पर दिन मे दोपहर तक पुण्यकाल है। मध्य रात्रि मे सक्राति होने पर पूर्व पर दोनो दिन पुण्य काल है। कर्क सक्रान्ति काल पूर्व

मे होता है। रात्रि सक्रान्ति हो तो पर दिन पुण्य काल है। उदयकाल से पूर्व ३ दण्ड सध्या काल कहलाता है। कर्क सक्रान्ति सूर्योदय मे होने पर परदिन मकर सक्रान्ति साय हो तो पूर्व दिन पुण्य काल होगा। वचन मूल मे उद्धृत है।

सिह, कुम्भ, वृष, वृश्चिक, कर्क सक्रान्ति का पुण्यकाल पूर्व दिन मे, मेष व कुम्भ की सक्रान्ति मे मध्यकाल मे अन्त्य– मिथुन, कन्या, तुला, धन, मीन की सक्रान्ति पर पुण्य काल १०,१६,२०,४० दण्ड तक मुख्य काल गौडकाल भेदसे माना जाता है। मकर सक्रान्ति दिन मे होने पर पूर्वकाल सक्रमण काल के बाद ही मानना चाहिए।

ग्रहणविचारः

अथ ग्रहणविचार ।

वृद्ध गौतम –

सूर्यग्रहे तु नाश्नीयात्पूर्व यामचतुष्टयम्।

चन्द्रग्रहे तु यामास्त्रीन् बालवृद्धातुरैर्विना।।

बशिष्ठ –

ग्रस्तोदये विधो पूर्व नाहर्भोजनमाचरेत्।

भृगु –

ग्रस्तावेवास्तमान तु रवीन्दो प्राप्नुतो यदि।

परेद्युरुदये स्नात्वा शुद्धोऽभ्यवहेन्नर.।।

कात्यायन –

चन्द्रसूर्य ग्रहे भुक्त्वा प्राजापत्येन शुध्यति।

तस्मिन्नेव दिने भुक्त्वा त्रिरात्रेणैव शुध्यति।।

व्यास –

रविग्रहः सूर्यवारे सोमे सोमग्रहस्तथा।

चूडामणिरितिख्यातं तदानन्तफल भवेत्।।

महाभारते–

सर्वस्वेनैव कर्तव्य श्राद्ध वै राहु दर्शने।

अकुर्वाणस्तु नास्तिक्यात् पङ्के गौरिव सीदति।।

दर्शन शास्त्रीयज्ञानं। यद्यपि दिवा चन्द्रग्रहो रात्रौ सूर्य्यग्रहश्च शास्त्रतः समापतति। तत्रापिस्नानदानादिकाः कृति प्रसंगस्त्याज्य इति तद्वोधक वचनभावादेव न दोष.।

शातातप –

आपद्यनग्नौ तीर्थे च ग्रहणे चन्दसूर्ययोः।

आमा श्राद्धं द्विजैर्दद्याच्छूद्रेण तु सदैव हि।। इति।

वृद्ध वशिष्ठ –

सूतके मृतके चैव न दोषो राहुदर्शने।

तावदेव भवेच्छुद्धिर्यावन्मुक्तिर्न दृश्यते।।

षट् त्रिशतिमते· सर्वेषा चैव वर्णाना सूतक राहुदर्शने।
स्नात्वा कर्माणि कुर्वीत् शृतमन्न विवर्जयेत्।।
कर्तव्यकर्म–
ग्रस्यमाने भेवत्स्नान ग्रस्ते होमो विधीयते।
मुच्यमाने भवेद्दान मुक्ते स्नान विधीयते।। इति।

अभिज्ञा–ग्रहण विचार वृद्धगौतम के मत मे– सूर्यग्रहण मे चार याम = प्रहर, पूर्व चन्द्रग्रहण मे ३ याम पूर्व भोजन नही करना चाहिये। बालक–वृद्ध रोगी के लिये यह नियम नही है। ग्रहण काल मे भोजन, मूत्र पुरीष सभी के लिये वर्जित है। चन्द्रमा ग्रस्तोदित हो तो दिन मे भोजन का निषेध है। यदि सूर्य व चन्द्रमा ग्रस्त अस्त हो जाय तो दूसरे दिन शुद्ध बिम्ब का दर्शन करने के पश्चात् भोजन किया जाय। निषिद्ध काल मे भोजन करने से प्राजापत्य व्रत करने से शुद्धि होती है। उसी दिन भोजन करने पर तीन दिन उपवास से शुद्धि होती है। रविवार को सूर्यग्रहण, सोमवार को चन्द्रग्रहण चूडामणि योग कहलाता है। ग्रहण काल का निर्णय पञ्चाड्ग से जानना चाहिये। कृत्य चन्द्रग्रहण दिन मे सूर्य ग्रहण रात्रि मे हो तो कोई कर्म विहित नहीं है। **शातातप** के के अनुसार आपत्ति काल मे अग्नि के अभाव मे चन्द्र ग्रहण मे अपक्व अन्न से श्राद्ध करना चाहिये। ग्रहण काल मे सूतक जन्म दोष नहीं लगता है। जब तक ग्रहण रहता है तब तक जनना शौच, मरणाशौच मे भी दान स्नान क्रिया किया जा सकता है। ग्रहणकाल के पश्चात् पुन पूर्ववत् सूतक मान्य है।

करणीय कर्म– सभी वर्ण के लोगो को ग्रहण काल मे सूतक होता है। ग्रहण काल के पूर्व स्नान, ग्रहण काल मे हवन मोक्ष के अतिम समय में दान तथा ग्रहणान्त मे पुन स्नान करना विहित है।

इति श्री गर्गकुलसुकुलपदवीक श्रीमुरलीधरात्मज मोहन लालतनूजलालमणि सूनुना श्रीमदिन्द्रदत्तोपाध्यायेन कृतस्तिथ्यादिनिर्णय स्समाप्त । सम्वत् १६०४।।

भ्राता श्रीन्द्रदत्तस्य यज्ञदत्तो विचक्षणः।
वेनी प्रसाद इतिख्यात पुत्रस्तस्य महाबल·।।
शिवसमो शिवदत्तस्तु पुत्रस्तस्याभवत् सुधी.।
कमलाकान्तस्ततः ख्यातः लोकमान्यो रिपुञ्जयः।।
महाज्ञानी महाविद्वान् दैवी शक्तिसमन्वित ।
सत्यनारायणो नामा सुतस्तस्य महामना।।
अभिराजी तु मातासीन्ममधर्मपरायणा।
गङ्गाप्राणा हरिप्राणा दानव्रतपरायणा।।
तत्कीर्तिविमलाख्याता टीकाभिज्ञेति नामिका।
तिथिनिर्णयग्रन्थस्य सम्यगर्थविवेचिनी।।
पितु. प्रसादाच्च तपः प्रसादात्
मातुः सदा धर्मरतिः प्रवर्धताम्।
श्री राधिकाया. सुमतिप्रसादात्
श्रीकृष्णभक्ति· सतत प्रवर्धताम्।।
आचार्यरामचन्द्रेण पित्रा सम्प्रेरित पुरा।
स्वपूर्वजानां न्यासोऽयं सुसंपाद्य प्रकाशित.।।
इति स्मृतिसिद्धान्तचन्द्रकास्थ तिथिनिर्णयभाषानुवाद ।

परिशिष्टम्-१

श्री कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्

वधूप्रवेश-द्विरागम (गवन) विमर्शः

विवाहे कन्याया गुरुवलम् विचार्यते। गुरु पतिकारक। त्रिकोणाय द्विसप्तगे कन्याराशित सति गुरौ कन्याविवाह शुभद। चतुर्थाष्टम व्ययभिन्न राशौ पूज्य। वृहस्पति सम्पूज्य कार्यो विवाह। तत्रापि स्वगेहे मित्रगेहे उच्चस्थे च श्रेष्ठ। नीचेऽस्तगते रिपुगृहे शुभदोऽप्यशुभद। तत्र विवाहसमये षोडशदिनाभ्यन्तरे कन्या नवोढा वधू सज्ञामनुप्राप्य पतिगृह गच्छेत् तदा शुक्रदोष न समापतति। विवाहे गुरो प्राधन्यात्।

आरम्भोद्वाह दिवसात् षष्ठे वाप्यष्टमे दिने
वधूप्रवेश सम्पत्ये दशमेऽथ समे दिने। "नारद"

अन्यत्र। **"विवाहमारभ्य वधूप्रवेशो युग्मे तिथौ षोडशवासरान्तात्"**

एतदेव, लोके विवाहे कन्या विदाई काल" कथ्यते। यदा तु. विवाहकाले षोडशदिनाभ्यन्तरे वा कन्याया पितृगृहात् पतिगृहगमन न भवेत् तदा विवाद परिदृश्यते। तत्र मतत्रय प्रचलितमस्ति।

'उर्ध्वं ततोब्देऽयुजि पञ्चमान्तादत· परस्तान्नियमो न चास्ति "मुहुर्त चिन्तामणौ" अस्याय भाव षोडशदिनान्तर पञ्चमवर्षपर्यन्त विषमवर्षे मेषालि– कुम्भेऽर्के कन्याया पितृगृहात् पतिगृहे यात्रा कर्तव्या। सापि वधूप्रवेशान्तर्गतत्वात् तत्र न शुक्रदोष विचारणा कर्तव्या। एव वधूप्रवेश काल वधू सज्ञा नवोढा सज्ञा च सीमारहिता।

अपरे कथयन्ति। वधूप्रवेशकाल वर्षपर्यन्तम् अस्ति कन्याविवाह कुलात् निर्गम। पुरुषविवाह प्रवेश एव वर्षमध्ये वृश्चिक, मेष, कुम्भ, सक्रातौ पितृगेहात् कन्या पतिगृह गच्छेत् तदानीं शुक्रदोष न विचारणीय।

अत्र विमर्श। विवाहे गुरुवल, गमने–द्विरागमे शुक्रवलम्, द्वयगे–त्रिरागमे राहुदोष विचार्यते।

अस्माक देशे परम्परासु च विवाहे यदि कन्या पत्या सह पतिगृह गत्वा पुनरागम्य द्वितीययात्रा कुर्यात् तदा **'गवन'** सञ्ज्ञाप्रसिद्धा। यदि नाम कन्या विवाहानन्तर षोडशदिनाभ्यन्तरे न गच्छेत् पश्चात् कुम्भालि मेषगे रवौ गच्छेत् तदापि **गवन** सञ्ज्ञा भवति। तत्पश्चात् पत्यु गृहात् समागम्य पुन पतिगृहे किचित् कालानन्तर प्रस्थानकालस्य **द्वयग सञ्ज्ञा 'दोंग'** इति लोके प्रसिद्धम् तत्र राहुदोष विचार्यते।

निष्कर्ष विवाहकाले यदि कन्या पितृगेहात् पतिगृह गच्छेत् तदा तु न कस्यापि मतभेद । द्वितीययात्राया गवने सति शुक्रदोष तदनन्तर 'दोग त्रिरागमे राहुदोषो विवाहकाले कन्या पतिगृह न गच्छेत् तदपि तस्या प्रवेश पतिकुले स्यादेव। यत कन्यापरिजन पत्यु समीपे विवाहानन्तर वधू समुवेश्य लोकाचारविधिना अन्न वस्त्रादिक च पत्या सह प्रेषयन्ति। तदेव वध्वा पतिगृहे प्रवेश । अपितु कन्या विवाहानन्तर कन्याया सर्वम् उपवास व्रतादिकम् पतिगोत्रेण एव भवति। पितृ गृहे यदि कन्या विपद्येत् तदपि तस्या सर्व भार पतिकुले एव भवति। मृतायाञ्च तस्यामशौच पतिकुले एव भवति। अतएव **'गवन'** शब्द सञ्ज्ञा उभयथा प्रचलिता। विवाहसमये प्रस्थापन न स्यात्तदा कथ्यते **'गवना देयमस्ति'** विवाहे कन्या प्रस्थाप्य पुन पिता स्वगेहम् आनीय यदा पुन प्रेषयति तदपि कथ्यते **'गवना'** देयमस्ति एव लोके यदा **'गवना'** सञ्ज्ञा भवति तत्र शुक्रदोष विचारणीय । यतो हि शुक्र पत्नीकारको ग्रहोऽस्ति। शुक्रस्य च स्वामी। अत सम्मुखे दक्षिणे च शुक्र विहाय **'गवन'** यात्रा विधेया। अन्यथा नवोढा सञ्ज्ञा वधूसञ्ज्ञा कियत् काल मन्येत्।

'नवोढा विधवा भवेत्' वामे शुक्रे नवोढाया सुखं हानिञ्च दक्षिणे।
धनं धान्य च पृष्ठस्थे, सर्वनाश· पुरः स्थिते।

यत्तु कथयन्ति **''द्विरागमे एव शुक्रदोषः विचारणीयः'**। तत्रापि एव समन्वय कन्याया विवाह एव प्रथम पतिगृहागमनमस्ति। तत्र षोडशदिनव्यवधानकाल एव सर्वोत्तमपक्ष । अत्र सर्वेषु आचार्येषु मतैक्यम् अस्ति। यत षोडशतिथय भदन्ति। पूर्णिमात अमापर्यन्तम्। अत्र आचार्यस्य मतम् एवम्।

करग्रहात् षोडशवासरोर्ध्वमयुग्म वर्षे भृगु वामपृष्ठत.।
कुम्भालिमेषार्कविना नवोढा पदैकमात्र गमन न कुर्यात्।।

करग्रहांत्विवाहदिवसात् षोडशदिनान्तर विषमवर्षे वामे पृष्ठे च शुक्रे मेष–वृश्चिककुम्भराशिस्थे सूर्ये गवना– द्विरागमपदवाच्या विधेया।

अत्यावश्यके शुक्रान्ध विलोक्य यात्रा विधातव्या। अन्यथा अनिष्ट शका हानिश्च सम्भाव्यते। एतदेव मतम् अस्माकम् पूर्वजानाम् प्रसिद्वम् अस्ति।

एवम् मुहूर्त चिन्तामणि–प्रमिताक्षरा टीकायाम् यत्तु व्याख्यातम् यत् पितृगृहात् पतिगृहम् गत्वा परावर्त्य पुन पितृगृहात् पतिगृहगमनम् एव द्विरागम । तत्रैव शुक्रदोष भवति इति तु परास्तम्। यत लोके दृश्यते, कन्याया वस्त्रादिकम् किञ्चित् मिष्ठान्नम् कन्या पितामुहूर्तेन जामातु गृहे प्रेषयित्वा प्रथम कन्या गमनकाल मन्यते। एव कन्याया पति गृहे गमन विनापि वधूप्रवेश प्रसिद्ध ।बहुश शास्त्रविरोधे वैमत्ये वा लोकप्रसिद्धपरम्परा मन्यते। इति दिक्

कन्या की विदाई में शुक्र-विचार

बालिकाओ की विवाह से पूर्व 'कन्या' सज्ञा रहती है। विवाह मे सिन्दूर-दान के पश्चात् कन्या की 'वधू' सज्ञा हो जाती है। उसी समय प्रथमत मन्त्र कहा जाता है—"**सुमङ्गलीरिय वधू** " विवाह के समय वृहस्पति का बल देखा जाता है। विवाह के समय ही यदि कन्या की विदाई भी हो जाय तो शुक्र के सम्मुख रहने का दोष नही माना जाता है। अनेक जातियो मे कन्या की विदाई प्राय विवाह के समय ही हो जाती है। तत्काल विदाई न होने पर विवाह के सोलह दिन के अन्दर विदाई होने पर भी शुक्र का विचार नही करते है। यह विदाई विवाह काल की ही विदाई मानी जाती है।

विवाह से सोलह दिन के पश्चात् एक वर्ष के अन्दर या उसके बाद भी विदाई करने पर लोकमत मे उसे 'गवन' देना कहते हैं। मुहूर्त चिन्तामणि के अनुसार विवाह से पॉच वर्ष के अन्दर विषम वर्ष मे अगहन, फाल्गुन, वैशाख, माह मे वधू प्रवेश माना गया है। पॉच वर्ष के बाद सम वर्ष या विषम वर्षो का अन्तर नहीं किया गया है। उनके मत से शुक्र दोष नहीं होता है।

वशिष्ठ जी के मत से पुरुष का विवाह—प्रवेश कन्या का विवाह कुल से निर्गम कहा गया है। उन्होने १ वर्ष तक वधू प्रवेश मान कर शुक्र दोष का निषेध किया है। उनके मत से १ वर्ष पश्चात् शुक्र-दोष माना गया है। इन दोनो से भिन्न मत आदि काल से परम्परा के अनुसार चला आ रहा है। विवाह के समय तत्काल विदाई मे शुक्र का दोष या अन्य कोई मुहूर्त नहीं देखा जाता है। १६ दिन तक किसी भी परिस्थिति मे विदाई हो जाय तो भी वह विवाह की विदाई के अन्तर्गत है। उसमे शुक्रदोष का विचार नहीं किया जाता है।

यदि कन्या की विदाई विवाह के समय नहीं होती है उसके बाद विदाई करने को 'गवना' देना कहते हैं। गवना मे शुक्र दोष देखा जाता है। इसके बाद दोग होता है। इस मे राहु का दोष देखा जाता है। १६ दिन के बाद शुक्र दोष देखने मे आर्ष वचन भी प्रमाण हैं।

"करग्रहात् षोडशवासरोद्धर्वमयुग्मवर्षे भृगुवामपृष्ठतः।
कुम्भालिमेषार्क विना नवोढा पदैकमात्रं गमनं न कुर्यात्।।"

विवाह से १६ दिन के पश्चात् यात्रा तभी किया जाय जब शुक्र पीछे या बाये रहे। यही सिद्धान्त हमारे यहॉ लोग परम्परा से भी मानते चले आ रहे है। किसी टीकाकार का मत है कि कन्या जब प्रथम बार पति गृह से वापस आ जाय, तत्पश्चात् पितृगृह से पुन पतिगृह की यात्रा करे तब उसे द्विरागमन कहते है। तभी शुक्र दोष देखा जाय। परन्तु लोकमत मे ऐसी प्रचलित परम्परा देखी जा रही है कि यदि परिस्थितिवश कन्या की विदाई विवाह मे नही हुई और बाद मे भी गवना देने की परिस्थिति नही होती है तभी लोग कन्या घर से कुछ दूर निकाल कर रास्ते से वापस कर लेते है अथवा कन्या के हाथ का चावल वस्त्र भेजकर गवना मान लेते है। जैसे यात्रा मे प्रस्थान निकालने की व्यवस्था है। इसके वाद दोग मानकर राहु के शुद्ध होने पर विदाई करते है। यह प्रचलित परम्परा सर्वमान्य है। इसलिए वधू–प्रवेश मे कन्या का पतिगृह जाना आवश्यक है। यह टीकाकार का मत स्वय अमान्य हो जाता है।

निष्कर्षः– लोक तथा शस्त्र दोनो मत अनुसार गवना सज्ञा होने पर शुक्र का दोष विचार करना चाहिए। यही नियम यहॉ प्राचीन परम्परा से मान्य रहा है। शास्त्र का रहस्य धर्म का तत्त्व परम्परा से जाना जाता है। स्मृतिया अनेक है, मुनियो के मतो मे एक वाक्यता नहीं है। अत **"महाजनो येन गतः स पन्था"**।

यदि विवाह के अवसर पर विदाई न हो सके और गवना देने के समय शुक्र सम्मुख या दाहिने हो रहे हो तो शुक्रान्ध मे विदाई करना चाहिए। विपरीत व्यवहार से आपत्ति आ सकती है– शास्त्र वचन है **"नवोढा विधवा भवेत्"** यदि वधू–प्रवेश मानकर शुक्र दोष नहीं देखा जाय तो 'नवोढा' शब्द निरर्थक हो जायेगा। नवा+उढा नवोढा अर्थात् नव विवाहिता। विवाह से १६ दिन के अन्तर्गत वृहस्पति के प्रभाव के कारण शुक्र दोष नही लगता है।

वधू–प्रवेश का अर्थ है—वधू का पतिकुल मे प्रवेश। विवाह–मण्डप में पिता द्वारा कन्यादान के उपरान्त सिद्धान्त रूप से कन्या का पतिकुल में प्रवेश हो गया। उसके वाद उस कन्या का सम्पूर्ण सस्कार एव सकल्प पति के गोत्र से ही होता है। कन्या एव वर को साथ बैठाकर कोहबर मे जो चावल एव अन्य सामान वर के घर भेजा जाता है। यह सब वधू–प्रवेश का ही अंग है।

परिशिष्टम्-२

व्रतपर्वतिथिविचारः

"नारद पुराण पूर्व खण्ड अध्याय २९ के अनुसार नित्य नैमित्तिक व्रत, पर्व उत्सव मे तिथि विचार सार सग्रह" तिथि निर्णय के अभाव मे कृत कर्म फलदायक नही होता है।

"श्रौत स्मार्त व्रत दान यच्चान्यत् कर्म वैदिकम्।
अनिर्णीतासु तिथिषु न किञ्चित् फलति द्विज"।।

यह नारद पुराण मे सनक ऋषि का वचन है।

जो तिथि सूर्योदय से लेकर रात्रि पर्यन्त होती है वह तिथि अहोरात्र परक पूर्ण कही जातीहै। दान, व्रत, हवन, पूजन मे वह सर्वथा शुद्ध तथा ग्राह्य है यदि कोई तिथि सूर्योदय मे नही है तो उसके विषय मे अलग–अलग तिथि निर्णय दिया जा रहा है।

एकादशी, अष्टमी, षष्ठी, पूर्णिमा, चतुर्दशी अमावस्या तृतीया यदि सूर्योदय मे न हो तो 'पूर्व विद्धा' न करके दूसरे दिन 'परविद्धा' प्रशस्त है–

"एकादश्यष्टमी षष्ठी पौर्णमासी चतुर्दशी।
अमावस्या तृतीया च ह्युपवासव्रतादिषु।।
परविद्धा· प्रशस्ता· स्युर्न न ग्राह्या पूर्व संयुता·।"
नागविद्धा तु या षष्ठी शिवविद्धा तु सप्तमी।
दशम्येकादशी विद्धा नोपोष्याः स्युः कदाचन।।
दर्शम् च पौर्णमासी च सप्तमी पितृ वासरम्।
पूर्वविद्धं प्रकुर्वाणो नरकायोपपद्यते।।"

कतिपय आचार्यो के मत से कृष्ण पक्ष मे तृतीया, सप्तमी नवमी चतुर्दशी पूर्वविद्धा ग्राह्य है–

"कृष्णपक्षे पूर्वविद्धां सप्तमी च चतुर्दशी।
प्रशस्तां केचिदाहुश्च तृतीयां नवमीं तथा।।

व्रत प्राय शुक्लपक्ष मे विशेष होते हैं। यदि सूर्योदय से लेकर मध्याह्नोत्तर तिथि नहीं है तो प्रात ३ मुहूर्त या २ मुहूर्त की सूर्योदयकाल मे तिथि रहने पर व्रत किया जाय–

''असम्भवे व्रतादीना यदि पौर्वाह्णिकी तिथि
मुहूर्त द्वितय ग्राह्य भगवत्युदिते रवौ।।''

प्रदोष अथवा रात्रि व्रत मे प्रदोषकाल व्यापिनी तिथि ग्राह्य है—

''प्रदोष व्यापिनी ग्राह्या तिथिर्नक्तव्रते सदा।
तिथि नक्षत्रसयोग विहितव्रतकर्मणि।''
प्रदोषव्यापिनी ग्राह्या त्वन्यथा निष्फल भवेत्।

जो व्रत या काम्यादि अनुष्ठान कर्म तिथि नक्षत्र के सयोग से विहित है उसके लिए प्रदोषकाल व्यापिनी तिथि व नक्षत्र का सयोग होना चाहिए। नक्षत्र युक्ततिथि अर्धरात्रि व्यापिनी होनी चाहिए—

अर्द्धरात्रादधो या तु नक्षत्रयुता तिथि·।
सैव ग्राह्या मुनि श्रेष्ठ नक्षत्रविहित व्रते।।

दोनो दिन अर्धरात्रि व्यापिनी नक्षत्र युक्त तिथि रहने पर पूर्व तथा पर दोनो ग्राह्य है। कार्यकाल व्यापिनी तिथि ग्राह्य है—

''रात्रिव्रतेषु सर्वेषु रात्रियोगोविशिष्यते।
तिथि नक्षत्रयोगेन या पुण्या परिकीर्तिता।
तस्यां तु तद्व्रत कार्यं सैव कार्या विचक्षणै ।।

नक्षत्र विहित कर्म मे ज्येष्ठा विद्धा मूल नक्षत्र, कृत्तिका नक्षत्र विद्ध रोहिणी नक्षत्र सन्तान हानि कारक है—

''ज्येष्ठा सॅमिश्रित मूलं रोहिणीवद्धि सयुता।
मैत्रेण सयुता ज्येष्ठा सन्तानादि विनाशिनी।।''

श्रवण द्वादशी व्रत सूर्योदय व्यापिनी ग्राह्य है। अमावस्या श्राद्ध कर्म मे अपराह्न व्यापिनी ग्राह्य है। यदि दूसरे दिन सूर्योदय से लेकर अपराह्न तक अमावस्या न रहे तो पूर्वदिन चतुर्दशी विद्धा भी श्राद्ध मे ग्राह्य है—

''अपराह्नद्वय व्यापिन्यमावस्या तिथिर्यदि।
क्षये पूर्वा तु कर्त्तव्या वृद्धौ कार्या तथोत्तरा''।।

सूर्योदय मे चतुर्दशी हो और मध्याह्नोत्तर अमावस्या तिथि हो तो वह भूतविद्धा कही जाती है। अत यदि अपर दिन मे मध्याह्नोत्तर अमावस्या न हो जाय तो श्राद्ध मे वही ग्राह्य है—

"अत्यन्त तिथि वृद्धौ च भूतविद्धा परित्यजेत्"

स्नान व्रत दान मे तो सूर्योदय व्यापिनी अमावस्या एव पूर्णिमा विहित है—

"या तिथिं समनुप्राप्य उदय याति भास्कर.।
सा तिथि सफला ज्ञेया स्नानाध्यानकर्मसु।।"

एकादशी के सम्बन्ध मे विस्तृत विचार निर्णय सिन्धु धर्मसिन्धु मे किया गया है। तथा नारदपुराण, पद्मपुराण एव स्कन्दपुराण मे विस्तार से निर्णय किया गया है। एकादशी व्रत दोनो पक्ष का सबको करना चाहिए।

एकादश्या न भुञ्जीत पक्षयोरुभयोरपि।
यो भुङ्क्ते सोऽत्र पापीयान् परत्र नरक व्रजेत्।।

एकादशी व्रत का निष्कर्ष यह है कि यदि दूसरे दिन पारण मे सूर्योदय मे कलामात्र भी द्वादशी प्राप्त है तो दशमी विद्धा एकादशी अथवा साट त्पण्ड की एकादशी न रहकर द्वादशी विद्धा एकादशी व्रत किया जाय—

विद्धाप्येकादशी ग्राह्या परतो द्वादशी न चेत्।
अविद्धापि निषिद्धैव परतो द्वादशी यदि।।

पारण मे द्वादशी न प्राप्त हो तो स्मार्त ग्रहस्थ दशमी विद्धा एकादशी करे। यति वैष्णव द्वादशी व्रत करे।

एकादशी कलामात्र विद्यते द्वादशी दिने।
द्वादशी च त्रयोदश्यां नास्ति वा विद्यते तदा।
गृहिणा पूर्वा यतिभिश्चोत्तरा।

यदि सूर्योदय मे एकादशी हो तदुपरान्त द्वादशी हो जाय तथा रात्रि शेष मे त्रयोदशी लग जाए ऐसी स्थिति मे पूर्व दिन अर्थात् दशमी विद्धा न करके दूसरे दिन व्रत किया जाय, पारण त्रयोदशी मे विहित है—

"एकादशी द्वादशी च रात्रि शेषे त्रयोदशी।
द्वादश द्वादशी पुण्यं त्रयोदश्यां तु पारणे।।"

विशेष सन्देह की स्थिति मे शुद्ध द्वादशी व्रत किया जाय। एकादशी विस्मृत होने पर भी द्वादशी व्रत किया जाय। यदि एकादशी आलस्य

वश या प्रमादवश अथवा अन्य किसी कारण से छूट जाय तो प्रायश्चित करके पुन प्रारम्भ किया जाय। प्रायश्चित हेतु– तीन दिन उपवास करके "**ॐ नमो नारायणाय**" मन्त्र का जप करके क्षमा प्रार्थना विष्णु भगवान से किया जाय।

कुछ लोग पुत्रवान् गृहस्थ को, कृष्णपक्ष की एकादशी, को सक्रान्ति मे, ग्रहण मे, पर्वकाल मे उपवास नहीं करना चाहिए, ऐसा कहते है–

संक्रान्तौ रविवारे च पातग्रहणयोस्तथा।
पारण चोपवासं च न कुर्यात् पुत्रवान् गृही।।

परन्तु अनेक वचन भोजन काल निषेध परक है। अत निर्जल उपवास न करके अन्न का त्याग अवश्य किया जाय। अन्यथा अन्न ग्रहण मे पाप कहा गया है–

"अर्केऽह्नि पर्वरात्रौ च चतुर्दशाष्टमीदिवा।
एकादश्यामहोरात्रं भुक्त्वा चान्द्रायण चरेत्।।"

अर्केऽह्निः– सक्रान्ति काल, पर्वरात्र ग्रहणकाल। सूर्यग्रहण मे चार प्रहर और चन्द्रग्रहण मे तीन प्रहर पूर्व भोजन का निषेध है। ग्रस्तास्त सूर्य और चन्द्रमा के हो जाने पर पुन सूर्य एव चन्द्रमा को देख कर प्रणाम करके तथा अर्ध्य देकर भोजन का विधान है–

"आदित्यग्रहणे प्राप्ते पूर्वयाम चतुष्टये।
नाद्यात् वै भुञ्जीत् सुरापान समोभवेत्।"

इस प्रकार कर्त्तव्य कर्म का पालन करने से कर्म विष्णु की कृपा से सफल होता है–

"यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्।।"

। इति ।
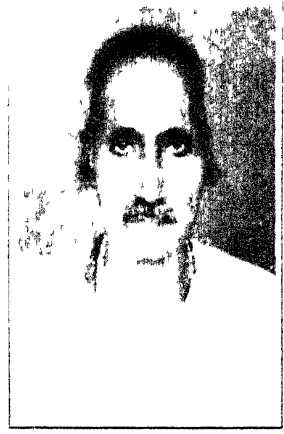
व्याख्याकार परिचय

नाम	प० श्री रामचन्द्र शुक्ल
पिता का नाम	प० श्री सत्यनारायण शुक्ल
जन्मतिथि	ज्यष्ठ शुक्ल तृतीया मगलवार वि० स० १६८८
जन्म स्थान	ग्राम रामडीह, पो० पटखाली
जिला	गोरखपुर, उ० प्र०
शिक्षा	मध्यमा (१६४६), [illegible]त्री (१६५२) आचार्य (१६५५) नव्यव्याकरण, वाराणसेय सस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी साहित्यरत्न(१६५६) हिन्दी साहित्य- सम्मेलन, प्रयाग
अध्यापन अनुभव	जनता उच्चतर माध्यमिक विद्यालय इन्द्रपुर, गोरखपुर (उ०प्र०) श्रीजगद्गुरू शकराचार्य विद्यालय इन्टर कॉलेज मेहदावल, सत कबीर नगर (उ०प्र०) श्री सनातन धर्म सस्कत महाविद्यालय मुक्तीश्वरनाथ गोरखपुर (उ०प्र०)
प्रशासनिक अनुभव	प्रधानाचार्य सस्कृत महाविद्यालय सोहगौरा, गोरखपुर (उ०प्र०) प्रधानाचार्य, श्रीजगद्गुरू शकराचार्य विद्यालय इन्टर कॉलेज मेंहदावल, सत कबीर नगर
सम्पादन एव प्रकाशन अनुभव	विद्यालय की पत्रिका १५ वर्ष नारद पुराण मे तिथि विचार, यन्त्रस्थ